XX/386.

~~P. 1-6?~~

pp. 30-33 missing

Rechecked

Page 6 is missing.

pp 30-33 are missing

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

राष्ट्रीय अभिलेखागार
भारत
National Archives
of India

XX/386

विगत ७० वर्षों के भारत के इतिहास में महामना पं० मदन मोहन मालवीय एक चमकते हुये सितारे हैं : अपने समय की राजनीति को ढालने तथा राष्ट्रीय आन्दोलन को गति प्रदान करने में उनका हिस्सा भुलाया नहीं जा सकता : मालवीय जी भारतीय स्वतंत्रता की लड़ाई की नींव के पत्थर थे : यदि हम मालवीय जी के जीवन = दर्शन तथा अनुभव की विवेचना करें ,उनसे शिक्षा ग्रहण करें और यह देखें ,समझें कि किस प्रकार मालवीय जी जैसे महापुरुष ने देश और समाज की सेवा की तो यही मालवीय जी के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी और यही उनका उपयुक्त स्मारक होगा : महामना मालवीय जी के नाम पर संस्थायें खोलने तथा मूर्ति स्थापित करने से कहीं अच्छा स्मारक है उनकी सेवा एवं आदर्शों से सबक सीखना और उन्हें अपने जीवन में उतारना :

मालवीय जी का प्रादुर्भाव उस समय हुआ जब १८५७ की जनक्रान्ति के बाद भारत संभल रहा था ,उसने आंखें खोलीं थीं और अंगड़ाइयां लेकर वह उठ रहा था : भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भारत का जो इतिहास लिखा उसे बनाने में मालवीय जी ने प्रमुख हिस्सा लिया था : वे जीवन के हर ओर देखते थे : उनका ध्यान शिक्षा की ओर पहले ही गया था : हमारे ऊपर पश्चिम का जो असर पड़ा उससे हमने उनकी अच्छी चीजें तो नहीं लीं किन्तु ऊपरी चीजें लेकर नकली बनने लगे थे : जिन चीजों ने हमारे देश को बड़ा किया था उन्हें हम भूलने लगे थे :

महामना मालवीय जी भारतीय संस्कृति के पोषक और युगद्रष्टा थे : भारत की संस्कृति की शाश्वत परम्परा और पवित्रता को बनाये रखने के लिये वह सदैव प्रयत्नशील रहे : संस्कृति के गौरव को बरकरार रखने और देश के गौरव की अभिवृद्धि करने में उन्हें अनुपमेय सफलता मिली और उन्होंने देशवासियों को अंगरेजियत की नकल " के अभिशाप से मुक्त करके उनमें अपनी संस्कृति और वेष = भूषा के प्रति आदर = भाव उत्पन्न कर दिया : महामना ने अंग्रेजी भाषा और पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित भारतीयों को यह शिक्षा तथा प्रेरणा दी कि यदि वे अतीत के गौरव तथा भारतीय संस्कृति की अविरल धारा से वे वंचित रह गये तो उनकी मौलिकता

कृ० प० उ०

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

समाप्त हो जायगी और वे विदेशी संस्कृति की "कार्बन कापी" मात्र रह जायंगे :

मालवीय जी का मत था कि भारत को भूल जाना अपने को भूल जाना होगा : पर उन्होंने यह भी महसूस कर लिया था कि आगे आनेवाली दुनिया विज्ञान से ही बनने वाली है : देश की समृद्धि के लिये विज्ञान के बढ़ते हुये चरण के साथ देश की पुरानी संस्कृति का समन्वय करना आवश्यक है यह मालवीय जी खूब समझ और देख रहे थे : मालवीय जी चाहते थे कि शिक्षा जगत एक ऐसा मन्दिर बन जाय जिसमें पाश्चात्य विज्ञान की समस्त उपलब्धियों को ~~लेते~~ समाविष्ट कर लिया जाय किन्तु उस शिक्षा जगत का वायु मंडल भारतीय संस्कृति के आदर्शों से ओतप्रोत हो : इन्हीं दोनों उद्देश्यों को सामने रखकर उन्होंने हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना की थी : महामना के ये विचार एक शाश्वत सत्य के रूप में इसीलिये आज भी अनुकरणीय हैं :

प्राचीन संस्कृति की आध्यात्मिकता और सहिष्णुता के साथ वैज्ञानिक प्रगति का समन्वय युग की मांग है : हमारी ~~संस्कृति की~~ पुरानी संस्कृति की जो ~~असल~~ असली चीजें हैं, जिन्होंने भारत को भारत बनाया है, उन्हें हम छोड़ नहीं सकते : किन्तु उनका समन्वय हमें आधुनिक युग के साथ करना है : आज हम न तो केवल अपनी पुरानी संस्कृति से ही चिपके रहकर जीवित रह सकते हैं और न वैज्ञानिक प्रगति का अन्धानुकरण कर ही : आज वैज्ञानिक प्रगति अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई है और परमाणु बम तथा उद्जन बम बनकर तैयार हो चुके हैं किन्तु हमारे पास आज वह मानसिक और आध्यात्मिक शक्ति नहीं है जो उनपर काबू रख सके : आज दोनों के समन्वय की बहुत ज़रूरत है : और समन्वय की यह विचारधारा ही महामना मालवीय जी की राष्ट्र को सबसे बड़ी देन है :

मालवीय जी ने अपना जीवन भारत की आज़ादी के लिये समर्पित कर दिया : उनके हृदय में बराबर स्वतंत्रता की लौ जलती रही, किन्तु उनके सामने भावी भारत का भी नक्शा था :

कृ० प० उ०

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

आगे आने वाली आज़ादी को मज़बूत बनाने के लिये उन्होंने शिक्षा की ओर ध्यान दिया : यही लक्ष्य गांधी जी का भी था : वे केवल यही नहीं चाहते थे कि देश अंग्रेज़ी शासन से मुक्त हो बल्कि वे देश की करोड़ों जनता की असली ताकत बढ़ाना चाहते थे : वे उनके दिलों से भय निकाल कर उन्हें हिम्मतवर बनाना चाहते थे : उन्होंने जो कुछ भी किया देश की जनता को ऊपर उठाने के लिये किया :

महामना का लक्ष्य था देश के लोगों को स्वराज्य लेने के लिये तैयार करना : ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना कि जो अपने पर भरोसा रखे अपना सिर ऊंचा कर चल सके : शिक्षा का मुख्य उद्देश्य देश के भावी निर्माताओं को तैयार करना है जो योग्य तथा सक्षम हों : इसी सिद्धान्त का परिपालन हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना करके उन्होंने किया था : विश्वविद्यालय की स्थापना करके महामना ने राष्ट्र की अनुपमेय सेवा की : इस विश्वविद्यालय में विज्ञान और तकनीकी और प्राविधिक शिक्षा को समुचित स्थान महामना ने दिया : भारतीय संस्कृति के महान पोषक महामना कितने महान राजनीतिज्ञ, दूरन्देश और देशभक्त थे इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हमें इसी से मिल जाता है कि उन्होंने अंग्रेज़ी तथा विज्ञान को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में राष्ट्रहित में प्रमुखस्थान प्रदान किया :

गांधी जी और मालवीय जी सभी बातों में एकमत नहीं थे किन्तु कुछ बुनियादी बातों पर दोनों में मतैक्य था : मालवीय जी को पुरानी संस्कृति से बहुत प्रेम था, वे अपने सिद्धान्तों के पक्के थे किन्तु वे नरमी से काम लेते थे : वे लोगों को मिलाना जानते थे, अलग करना नहीं : यह हमारा और आपका, देश का दुर्भाग्य है कि आज देश में अलग करने वाली शक्तियां काफ़ी बढ़ गई हैं :

आज हमारे सामने पहला सवाल यह है कि हम इस देश के लोगों में एकता कैसे पैदा करें : वर्गों और रीतिरिवाजों में विभिन्नता के बावजूद यदि हम भारत के पिछले दो हज़ार वर्षों के इतिहास को देखें तो हम पायेंगे कि भारत के मन में शुरु से ही समन्वय की बहुत ज़बर्दस्त ताक़त रही है, किन्तु जब से हमलोगों ने अपने दिलो दिमाग के दरवाज़े बन्द कर लिये तभी से हमारा पतन शुरु हो गया :

कृ० प० उ०

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

यदि आज हम अपनी संस्कृति की झलक देखना चाहें तो हमें हिन्द चीन, कम्बोडिया और मंगोलिया में वह दिखलाई पड़ती है : उस समय के लोग खुले दिमागों से दुनिया के दूर दूर देशों में जाते थे : उन्होंने वहां भारतीय संस्कृति की अमिट छाप छोड़ी है : मंगोलिया के लोगों का कहना है कि वे भारतीय बौद्ध राजकुमारी के वंशज हैं : किन्तु जब से हमने अपने दिमाग के दरवाजे बन्द कर लिये तबसे हमारा पतन शुरु होगया :

हमारे यहां राजपूतों का इतिहास गौरवमय रहा है : उसे पढ़ने से हमारा हृदय भर आता है, सर ऊंचा उठजाता है, किन्तु उनमें सबसे बड़ी कमजोरी यही रही कि उनमें मिलकर काम करने का माद्दा नहीं रहा, वे आपस में ही लड़ते रहे और विदेशी इससे लाभ उठाते रहे :

आज सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि लोग अपने अपने धर्म को मानते रहें, फिर भी भारत के सभी लोगों का राष्ट्रीय = धर्म एक हो : हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि अलग = अलग धर्म मानने वाले सभी भारतीय हैं : भारतीय संस्कृति की यदि कोई बुनियादी चीज है तो यही है : सहिष्णुता और सहनशीलता प्राचीनकाल से भारतीय संस्कृति की विशेषतायें रही हैं : इनका असर हमारे ऊपर अनजाने ही पड़ता रहता है : आज हमें इसे क़ायम रखना है :

यदि हमने अपनी प्राचीन संस्कृति को तंग ख्याली से देखा और दूसरे धर्मवालों को अपने से अलग रखा तो हम उस संस्कृति के साथ नाइंसाफ़ी करेंगे : हमारी संस्कृति जोड़ने वाली है, अलग करनेवाली नहीं :

अपने अपने दिलों से संकीर्णता निकाल कर महामना मालवीय जी जैसे महापुरुषों के उपदेशों पर देशवासी आचरण करें और उनके जीवन से प्रेरणा लें क्यों कि बड़े आदमियों की सीख लेकर ही आदमी बड़ा बनता है : और मालवीय जी तो हमारी संस्कृति में जो कुछ भी अच्छा है, ऊंचा है, महान है उन सब की साक्षात मूर्ति थे :

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

हम मालवीय जी का स्मारक बनाने की कोशिश करते हैं किन्तु दुनिया में कितने लोगों का इतना शानदार स्मारक होगा जितना कि मालवीय जी का है । हिन्दू विश्वविद्यालय उनका शानदार स्मारक है : यह ऐसी ज़िन्दा चीज़ है जो उनकी याद भी दिलाये और आगे की ओर भी रास्ता दिखाये :

बचपन में ही मुझे महामना मालवीय जी के संपर्क में आने का अवसर मिला : मैं मालवीय जी का अत्यधिक आदर करता था : युवावस्था में जब मैं विलायत से लौटकर आया तो मैं उनसे अक्सर मिला करता था ,प्रश्न किया करता था और वे मुझे समझाया करते थे : कभी कभी मैं उनसे उलझ भी जाता था किन्तु वह सदैव बड़े मीठे पर पुरअसर तरीके से मेरी शंकाओं का समाधान करते थे : हम नौजवान मालवीय जी के प्रति शिकायत करते थे कि वह धीमे चलते हैं : जवानी के जोश में हमें ऐसा ही लगता था :

स्वतंत्रता के सेनानियों के काम और तरीकों का सही मूल्यांकन तभी संभव है जब कि हम तत्कालीन स्थिति और परिस्थितियों से अवगत हों और यह विचार करें कि उन परिस्थितियों में कितना कुछ कर सकना संभव था :

आज का नवयुवक स्वतंत्रता की लड़ाई के बारे में अनभिज्ञ है : किताबों से पढ़कर वे कुछ जानते हैं पर यह पर्याप्त नहीं है : अच्छा हो महामना जैसे महापुरुषों का जीवन वृत्तान्त हम जानें और उन परिस्थितियों का अध्ययन करें जिनमें इन नेताओं को गुज़रना पड़ा :

मुझे खुशी है कि चिरंजीव पद्मकान्त ने मालवीय जी के संस्मरणों का यह संग्रह करके उनके वैभवशाली व्यक्तित्व की विभिन्न झलकियां हमारे सामने रखने की अच्छी कोशिश की है : मालवीय

कृ० प० उ०

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

१८५७ तक समस्त भारत अंग्रेजी झंडे के नीचे आ चुका था। भारत की सम्पूर्ण सैनिक हार हो चुकी थी, पर केवल सैनिक हार मात्र से ही कभी कोई विजेता जो अपनी विजय को क्षणिक नहीं, स्थायी बनाना चाहता है, कभी सन्तुष्ट नहीं होता। स्थायी विजय के लिए आत्मिक तथा नैतिक विजय सैनिक विजय से कहीं अधिक अनिवार्य है। हिटलर ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "माइन कैम्फ" में एक स्थान पर लिखा है :

और अंग्रेज भी इस सत्य से अपरिचित न थे।

हमारा सम्पूर्ण इतिहास इस बात का साक्षी है कि कितनी ही बार सैनिक हार हो जाने पर भी अपनी उच्च सभ्यता, नैतिकता तथा धार्मिकता और सतत सम्बन्धी सतत दृढ़ता के सहारे भारत ने अपनी सैनिक हार को नैतिक विजय में परिणत कर डाला है। भारतीय सभ्यता आज तक जीवित रह सकी है इसका मूल कारण भी यही है। शक आये, हूण आये, यूनानी आये, बैक्टेरिया वाले आये। पर आज भारत में वह कहाँ हैं? उनका अलग अस्तित्व कहाँ रह गया? साफ है कि विशाल हिन्दुत्व में वह उसी प्रकार समा गये जैसे विभिन्न नदियाँ सागर में समा जाती हैं। इसका फल यह हुआ कि सैनिक हार निःस्सार हो गयी, न कोई विजेता रहा और न कोई विजित। दोनों एक हो गये। और इस द्वन्द्व में यदि किसी को विजय मिली, कोई विजयी कहला सकता है तो वह भारतीयता ही है।

मुसलमान जब यहाँ आये उस समय परिस्थिति दूसरी थी। देश में स्वयं फूट पड़ चुकी थी। ब्राह्मण धर्म का प्रसार तब क्षीण प्राय हो रहा था। जैन और बौद्ध धर्मों के रूप में प्राचीन सनातन या ब्राह्मण धर्म के विरुद्ध बगावत हो चुकी थी। यज्ञ तथा बलि इत्यादि कर्मकांड के विरुद्ध "अहिंसा परमो धर्मः" के नाद से देश निनादित हो रहा था। बौद्ध धर्म राज धर्म बन चुका था। ब्राह्मण जिनके हाथों में धार्मिक तथा सामाजिक जगत की बाग डोर सदैव रही और जिसने अपनी व्यवस्थाओं द्वारा सैनिक हारों को अपनी धार्मिक तथा नैतिक विजयों द्वारा अन्ततोगत्वा राजनैतिक विजयों में परिणत किया था, उसका न केवल

कोई सम्मान ही रह गया था बल्कि वह सभी प्रकार से अपमानित और लांछित हो रहा था । ब्राह्मण समाज मे व्यवस्था देने और उसे समाज द्वारा मनवाने की शक्ति ही क्षीण हो चुकी थी । किसने माना उस समय की हुई ब्राह्मण समाज की इस व्यवस्था को कि "न पठेत् यावनी भाषाम्, न गच्छेत् जैन मन्दिरम्" । "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" की घोषणा करने वाले कौन थे ? हिन्दू ही न ? उधर विजेता के एक हाथ मे जहाँ तलवार थी, वहाँ उसके दूसरे हाथ मे कुरान पाकशरीफ की एक पोथी भी थी । महाभारत के कृष्ण युद्ध तथा राजनीति से वैराग्य लेकर मथुरा और वृन्दावन की गलियों मे गोपियों के संग रास रचा रहे थे और इन सब का नतीजा यदि यह हुआ कि १८० अफगान घुड़सवारों को अपने देश की ओर आते देखकर बंगाल का राजा वीर सेन रक्त बहाने की अपेक्षा किले को छोड़कर पिछले दरवाजे से भाग कर चला गया तो इसमे आश्चर्य की बात ही क्या है ? इस बार की सैनिक हार को आध्यात्मिक विजय मे बदल देने वाला कोई न था । जो ब्राह्मण दूसरों को स्पर्श कर हिन्दू बना लेते थे उनकी यह दशा हो गयी कि दूसरों द्वारा स्पर्श किये जाने पर उनका ब्राह्मणत्व स्वयं ही मलिन और अशौच होने लगा ।

अंग्रेजों की सम्पूर्ण सैनिक विजय के बाद देश के सामने फिर यही समस्या उठ खड़ी हुयी । मुसलमानी इतिहास से लाभ उठाकर अंग्रेजों ने प्रत्यक्ष रूप से तो धार्मिक और सांस्कृतिक मामलों से राज्य को अलग रखने की तथा उसमे किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप न करने की घोषणा की पर अप्रत्यक्ष रूप से तो इस भारती हार या अंग्रेजों की विजय का जो परिणाम होना था वह हुआ ही । उसे रोक कौन सकता था ?

सारे देश मे ईसाई धर्म प्रचारकों का जाल सा बिछ गया । ईसाई पादरी स्वतंत्रता पूर्वक गाँव गाँव मे घूमने लगे । सरकारी नौकरी प्राप्त करने के लिये अंग्रेजी शिक्षा आवश्यक मानी गयी । पाठशालाओं और मकतबों के स्थान पर नये नये स्कूल और कालेज खुलने लगे और उनमे नये प्रकार की शिक्षा दी जाने लगी । इस शिक्षा का प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि बहुत ईमानदारी के साथ हममे से ही बहुत से विचारक और देश प्रेमी ऐसे पैदा हुये और होने लगे जिन्होंने इस बात को मुक्त कंठ से स्वीकार कर लिया कि विजेता हमसे अधिक सभ्य है और हमारी सभ्यता वास्तव मे तिरस्करणीय और हेय है । उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा के मूल संचालक मैकाले के इस कथन को वेद वाक्य मान लिया कि "योरप के किसी भी अच्छे पुस्तकालय की एक आलमारी हिन्दुस्तान और अरब के समस्त साहित्य के मुकाबिले मे काफी है ।" हम और हमारे रीति रिवाज जंगली हैं इस अंग्रेजी प्रचार को भी हमने सत्य मान लिया । देश मे एक नये ऐंग्लो

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

या बैम ऐंग्लो मुस्लिम समाज की सृष्टि होने लगी ।

हाल ही मे उस समय के एक प्रतिष्ठित फ्रीज यात्री मिस्टर केन द्वारा लिखित एक पुस्तक मे पढ़ रहा था । यह पुस्तक बड़ी पुरानी है और जरा जीर्ण दशा मे है । इसे अपने समय मे पूज्य मालवीय जी ने भी पढ़ा था और पुस्तक के हाशिये मे यत्र तत्र उनके लिखे या टिप्पणियाँ भी है । उस पुस्तक से यहाँ एक उद्धरण मै दे रहा हूँ जिस पर पूज्य मालवीय जी की हस्तलिपि मे टिप्पणी के रूप मे लिखा हुआ है "शर्म" । उद्धरण इस प्रकार है :

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

एक इसी उदाहरण से आप उस समय की देश दशा का कुछ अनुमान कर सकते हैं क्योंकि बंगाल और विशेषकर कलकत्ता उस समय अंग्रेजों का मुख्य कार्य क्षेत्र और राजधानी होने के कारण सारे देश की अगुवाई कर रहा था। हमारे बंगाली भाई बड़े गर्व से आज भी कहते हैं

और यह बात बहुत कुछ अंशों में सही भी थी।

राजनैतिक हार की पीड़ा तो थी ही पर हमारे सांस्कृतिक, नैतिक और आत्मिक विजय की जो तैयारियाँ हमें शिथिल बनाने के वास्ते अन्दर ही अन्दर की जा रही थीं उसने दूरदर्शी देशभक्तों को सर्वाधिक चिन्तित बना दिया।

मुस्लिम विजय के उपरान्त अपने धर्म और अपनी सभ्यता की रक्षा के लिये हमारे पुरखों ने अपने धर्म के चारों ओर "मुझे मत छुओ" की जो अलंघ्य और मजबूत चहारदीवारी खड़ी कर दी थी वह ऐसी कठोर हो रही थी कि उसको फांदना तो कठिन था ही उसे एक बार फांदने के बाद उसके भीतर पुनः प्रवेश पा सकना तो बिलकुल ही असम्भव था। नतीजा यह था कि जो एक बार दायरे से निकला सो निकला। इस प्रकार बहिष्कृतों की संख्या वृद्धि भी हम स्वयं ही कर रहे थे। इधर अंग्रेजी शिक्षा के फलस्वरूप प्राप्त मानसिक स्वतंत्रता ने मानसिक दासता का स्थान ग्रहण कर लिया। अंग्रेजी रंग में लोग ऐसे रंगे कि खाना, पीना, उठना, बैठना, बोलना, चालना या यों कहिये कि उनकी सारी विचार धारा और रहन सहन सब कुछ अंग्रेजी हो रहा था। नाम मात्र के वह भारतीय थे, बाकी इनका सब कुछ अंग्रेजी या विलायती हो चुका था। सारे समाज बन्धन अस्त व्यस्त होकर टुकड़े टुकड़े होने लगे। विद्या, नीतिमत्ता, धर्मनिष्ठा, व्यवस्थित आचरण और गृहस्थी इनका जो पारस्परिक सम्बन्ध हो सकता है और जिसके अभाव में विद्वान से विद्वान नेता भी देश को ऊपर और ऊंचा नहीं उठा सकते उस सम्बन्ध मर्यादा को अंग्रेजी शिक्षा ने सबसे पहले तोड़ा।

इस भयानक परिस्थिति की प्रतिक्रिया स्वरूप राजा राममोहन राय, श्री केशव चन्द्र सेन इत्यादि नेताओं ने ब्रह्म समाज या प्रार्थना समाज इत्यादि नये धर्म पथ चलाये पर वह यह भूल गये कि नये धर्म पंथ स्थापित कर समाज की रक्षा कर सकने की कल्पना ही भ्रमपूर्ण और हास्यास्पद है। उन्हें यह भी स्मरण न रहा कि सरकारी मान सम्मान

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

और थोड़ी बहुत अंग्रेजी शिक्षा की संकुचित पूंजी ही नया धर्म प्रचलित करने वालों के लिये पर्याप्त नहीं हो सकती । फल यह हुआ कि अपने नये धर्म के प्रचार के जोश में उन्होंने ईसाइयत के प्रचार और प्रसार में तो बाधा डाली नहीं किन्तु अपने को अलबत्ता उन्होंने समाज से बहिष्कृत कर लिया । हजारों वर्षों पुरानी समाज व्यवस्था को बात की बात में उठा देने की डींग मारने वाला व्यक्ति यदि समाज में उपहासास्पद बन जाय तो इसमें लोगों का क्या दोष ? निश्चय ही स्वामी विवेकानन्द जी अपने राम कृष्ण मिशन द्वारा इस बाढ़ को रोकने में सराहनीय कार्य कर रहे थे ।

स्वामी दयानन्द जी महराज ने भी इस दिशा में आर्यसमाज की स्थापना का महान कार्य किया । ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज के विपरीत आर्य समाज ने लोगों में अपने धर्म के प्रति दृढ़ता और कट्टरता पैदा की और उन्हें विदेशियत में दीक्षित होने से रोका । क्यों कि उसकी नींव प्राचीन वेदों पर ही रखी गयी थी । पर आर्य समाज भी अब अन्ततोगत्वा एक समाज बनकर ही रह गया । जाति को शंकराचार्य की तरह वह अपने साथ न ले जा सका ।

एक ओर यह सब हो रहा था दूसरी ओर लोगों में यह विश्वास भी जोर पकड़ रहा था कि केवल धार्मिक और सामाजिक सुधार से ही देश उन्नति नहीं कर सकता । राजनैतिक स्वतंत्रता हमारी प्राथमिक आवश्यकता है जिसके अभाव में भली से भली धार्मिक और सामाजिक व्यवस्था अपना अस्तित्व नहीं बनाये रह सकती । पर दोनों ही विचारधाराओं की राजनीति पर धार्मिक का मूल स्रोत एक ही अर्थात् भारतीयता की रक्षा, था इसलिये उस समय प्रभाव काफी था । लोकमान तिलक ने अपने राजनैतिक आन्दोलन का श्री गणेश गणेशोत्सव से किया और महामान्य रानाडे और उनके शिष्य महामान्य गोखले जी इसी दल के नेता थे । सुधारकों का एक दूसरा दल भी था जिसका नेतृत्व आगे चलकर किया । यह दल इंगलैंड और भारत के सम्बन्ध को विधि की कृपामयी लीलाओं में गिनता था । उनका विश्वास था कि यदि भारतीयता का एक अद्भुत मन्दिर संसार में सर्वांग सुन्दर बनेगा तो तभी जब कि उसकी नींव रेत पर नहीं चट्टान पर रक्खी जाय । इसलिये कि नींव चिरस्थायी और सबल हो । सामाजिक सुधार पर यह दल अत्यधिक जोर देता था । उनके लिये समाज सुधार मूल प्रश्न था, राजनैतिक सुधार तो उसके फलस्वरूप आने ही थे । उस समय की विचारधारा का सुन्दर प्रतिबिम्ब आप इन पंक्तियों में देख सकते हैं जो १९वीं शताब्दी के अन्त में पूना के 'ज्ञान प्रकाश'

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

पत्र मे प्रकाशित हुयी थी ।

शास्त्री : तुम्हें कुछ ही दिनों मे औरतों के पैर धोना पड़ेगा ।

युवक : कोई बुरी नहीं । स्त्रियों को मै गंधर्व एवं घर की आत्मा समझता हूँ ।

शास्त्री : अर्थ बतलाने की नवीन शैली बड़ी अच्छी है ।

युवक : धन्य पैशवाई शास्त्री जी महाराज धन्य, भला कहीं "रामः, रामौ" करने से भी अक्ल आ सकती है ?

शास्त्री : अच्छा भाई, न सही । तुम्हारे से ही लोगों को अक्ल आने दो ।

इस प्रकार का विचार संघर्ष सारे देश मे चल रहा था । एक ओर अंग्रेजी शिक्षा से प्रभावित होकर कुछ लोग भारतीयता से विमुख होकर ईसाइयत की ओर झुक रहे थे, स्वजनों, स्वदेश, स्वभाषा, स्ववेश सबसे उनके मन मे घृणा सी उत्पन्न हो गयी थी और वह देश मे रहते हुये भी विदेशी बन चुके थे । दूसरी ओर वे कट्टर पंथी शास्त्री, पंडित और आचार्य जो अपनी जगह से टस से मस होने को तैयार नहीं थे, भले ही सरकारी प्रश्रय प्राप्त नवीन धारा के संघर्ष मे उनके साथ उनका धर्म उनकी सभ्यता, उनका अस्तित्व ही क्यों न टकराकर चूर चूर हो जाय । राजनैतिक दासता के कारण देश की लक्ष्मी बिना किसी रुकावट के सात समुद्र पार विलायत की ओर खिंची चली जा रही थी । देश मे भूख, महामारी और अकाल का नंगा नाच हो रहा था। लोग भिखारी हो रहे थे । राजनैतिक दासता दूर करना मुख्य प्रश्न था । पर उसका उद्देश्य भी भारतीयता तथा हिन्दुत्व की रक्षा था । पंजाब केसरी स्वर्गीय लाला लाजपत राय जी ने जैसा एक बार कहा भी था कि हिन्दुत्व खोकर यदि स्वराज्य मिले भी तो वह मुझे स्वीकार नहीं । यह दशा थी भारत की सन् १८६१ मे जिस वर्ष के दिसम्बर मास की २५ वीं तारीख को एक अत्यन्त गरीब ब्राह्मण परिवार मे प्रयाग के भारती भवन मुहल्ले की एक बड़ी ही संकरी गली मे स्थित एक जराजीर्ण टूटे फूटे मकान की एक कोठरी मे मालवीय जी महराज का जन्म हुआ ।

यहीं पर अब मै आपका थोड़ा संक्षिप्त परिचय उस परिवार और उन व्यक्तिगत परिस्थितियों से भी करा देना चाहता हूँ जिनमे मालवीय जी जन्मे, पाले पोसे गये और बड़े हुये क्योंकि, और लोग माने या न माने, मै मानता हूँ कि लोगों के निर्माण मे व्यक्तिगत परिस्थितियों का भी बहुत बड़ा हाथ होता है ।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India
NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

पुज्य मालवीय जी के पितामह पंडित प्रेमधर जी एक अत्यन्त गरीब पर सन्तोषी, चरित्रवान, परम धर्मिष्ठ और भगवद् भक्त मालवीय ब्राह्मण थे। मालवीय अर्थात् "मालवा" से आये हुये। उनका अधिकांश समय अपने आराध्य राधा कृष्ण की उन भव्य और मनोहर मूर्तियों के पूजन में जाता था जो आज भी हमारे परिवार के उसी पुरातन मकान में वैसे ही स्थापित है और जिन पर मालवीय जी की इतनी अधिक आस्था थी अपने अन्तिम दिनों तक जब कभी वह प्रयाग से होकर गुजरे अपने ठाकुर जी का दर्शन किये बिना आगे नहीं बढ़ते थे। किसी प्रकार का संकट पड़ने पर मानों देवता की आज्ञा प्राप्त करने के लिए, आँख मूंद कर घंटों इन मूर्तियों के सामने हाथ जोड़ कर बैठे हुये मैंने उन्हें स्वयं देखा है। मालवीय जी के पिता हमारे पर बाबा, पंडित ब्रजनाथ जी पाँच भाई थे। यह भी अपने पिता जी की ही तरह परम भगवद् भक्त थे। संस्कृत विद्या तथा शास्त्रों में उनकी अच्छी गति थी। जीविका का एक मात्र साधन था। कथा वाचन और सो भी वर्ष में केवल दो चार बार। कथा पर जो कुछ चढ़ जाता था उसके अतिरिक्त वह किसी का दान स्वीकार नहीं करते थे। कहते थे कि दूसरों का अन्न खाकर उसे पचा सकने की शक्ति जिस ब्राह्मण में हो वही दान लेने का अधिकारी है। अपने श्रम अर्थात् कथा वाचन से जो प्राप्ति हो जाती है उससे ही हमें सन्तोष करना है। यद्यपि आज जब हम लोग किसी के यहाँ का भेंट पूजा हुआ दान लेने से इंकार करते हैं तो लोग उसे अभिमान समझने लगते हैं, पर बात ऐसी है नहीं। यह नियम हमारे पूजनीय पर बाबा का बनाया हुआ है और यह उस समय बनाया गया था जिस समय परिवार की आर्थिक स्थिति सभी दृष्टियों से अत्यन्त कष्टकर ही कही जा सकती है।

सोचिये तो जरा हमारे वृद्ध प्रपितामह पं० प्रेमधर जी का एक छोटा सा मकान ही तो सम्पत्ति की दृष्टि से पुज्य बाबा पं० ब्रजनाथ को मिला था जो स्वयं चार भाई थे। और पर बाबा पं० ब्रजनाथ जी का स्वयं अपना परिवार न कुछ छोटा था और न उनके अन्य भाइयों का ही। हमारे पर बाबा स्वयं चार भाई थे और हमारे बाबा छै भाई तथा दो बहनें। उस छोटे से मकान के एक चौथाई हिस्से में हमारे पर बाबा अपने ६ पुत्रों और दो बहनों के साथ कैसे रहते होंगे। मेरे लिये तो आज भी यह प्रश्न पहेली बुझने जैसा ही है। गरीबी का यह हाल कि दोनों समय भरपेट सबको भोजन मिल जाय यही बहुत था, लड़के लड़कियों को शिक्षा देने की बात तो बहुत दूर। रात्रि में दिया जलाने के लिये तेल लाने का भी टोटा रहता था। गनीमत यही थी कि सारा परिवार एक साथ रहता था, रसोई एक साथ होती थी। इसलिये पढ़ते रात्रि में भोजन गृह में [illegible]

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

एक दीप तथा एक दो अन्य और दीप जलाकर किसी तरह काम चलाया जाता था, जिसे ९.१० के अन्दर बुझा देना जरूरी था। ऐसी दशा में रात्रि में बच्चे पढ़ सकें इसके लिये दीपक कहाँ से आता ? मालवीय जी को म्युनिसिपलटी की लालटेनों के नीचे खड़े होकर या मित्रों के यहाँ जाकर रात्रि में रटना और पढ़ना पड़ा था और कोई भाई तो अधिक पढ़ ही नहीं सकते थे। मालवीय जी इतनी शिक्षा क्यों और कैसे पा सके इसकी भी एक सुन्दर सी कथा है जिसे मैंने अपने घर की बड़ी बुढ़ियों तथा बूढ़ों से सुन रक्खा है। यद्यपि आज के जमाने में इन कथाओं पर विश्वास ला सकना अत्यन्त कठिन है पर है यह सत्य और ऐसा आप भी मानेंगे सत्य कभी कभी उपन्यासों से अधिक रोचक तथा आश्चर्यजनक हुआ करता है।

मैं ऊपर ही कहता हुआ हूँ कि हमारे परबाबा परम् धार्मिक और भगवद् भक्त थे। सन् १८५६.५० में वह अपने पूज्य पिता तथा माता जी का श्राद्ध कर्म करने के लिये गया जी गये थे। गया जी में श्राद्ध कर्म समाप्त होने पर वहाँ के धर्म गुरु पंडे सुफल बुलाते हैं और यजमान को उनकी मनोवांछित कामना पूर्ण होने का आशीर्वाद देते हैं। सुफल बुलाते समय हमारे परबाबा ने अपनी यह कामना प्रकट की थी कि मेरे एक ऐसा पुत्र हो जिसके लिये कहा जाय कि "न भूतो न भविष्यति" अर्थात् ऐसा न हुआ और न होगा। इसी घटना के बाद मालवीय जी महराज का जन्म हुआ। कहा जाता है कि मेरे पर बाबा की धारणा थी कि उनके द्वारा गया जी में माँगा जाने वाला उनका यही तीसरा पुत्र है। यही कारण था कि उन्होंने अपने इस तृतीय पुत्र के लिये जो कुछ भी वह अपनी उस संकीर्ण आर्थिक परिस्थितियों में कर सकते थे, किया और आगे चलकर समय ने सिद्ध भी कर दिया कि उनकी धारणा असत्य न थी और गया जी में श्रद्धापूर्वक माँगी गई उनकी याचना वास्तव में सुफल हुयी।

हमारे परिवार में धार्मिक उत्सव बड़े ही प्रेम और उमंग के साथ मनाये जाते रहे हैं, विशेषकर जन्माष्टमी, श्रावण में झूले, दीपावली और होली। जन्माष्टमी उत्सव की तो बात ही निराली थी। श्रृंगार,गाना,बजाना,नृत्य,प्रसाद इत्यादि की धूम रहती थी। सम्भवतः इसीलिये हमारे परिवार में संगीत का प्रचार भी सदैव से रहा है। मालवीय जी स्वयं अच्छे संगीतज्ञ थे।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

अपने परबाबा का तो मुझे स्मरण नहीं, पर अपनी पर दादी का मुझे अच्छी तरह स्मरण है। उनके रहते त्योहारों पर रसोई सदा पुराने घर मे होती थी, सारा परिवार वहाँ इकट्ठा होता था, स्नान ध्यान पूजापाठ सब कुछ वहीं और अन्त मे मेरी परदादी स्वयं सबके माथे पर तिलक लगाती थीं। सम्मिलित कुटुम्ब प्रणाली के विरुद्ध कुछ भी क्यों न कहा जाय और यह मानते हुये भी कि उसके विरुद्ध जो कुछ कहा जाता है उसमे बहुत कुछ सत्य भी है, मै आज भी उन दिनों की याद कर उनके लिये तड़प उठता हूँ। खैर, मै कहाँ का कहाँ चला जा रहा हूँ।

यह सब कहने का कुल तात्पर्य इतना ही है कि मालवीय जी के जीवन पर इन परिस्थितियों की बड़ी जबरदस्त छाप थी। वह परम धार्मिक, भगवद् भक्त, साधक, प्राचीनता के समर्थक और पुजारी तथा स्वयं भुक्त भोगी होने के कारण गरीबी के दुश्मन और गरीब विद्यार्थियों के विशेष रूप से सच्चे शुभ चिन्तक थे। वह उन देश भक्तों मे न थे जिन्हें देश की दशा का ज्ञान केवल पुस्तकों द्वारा या मानसिक रूप से ही प्राप्त होता है और नहीं, वह उन स्वर्गीय देवतों की तरह थे जिन के स्वर्णिम तथा रंग बिरंगे और चमकीले पंख को आकाश मे फड़फड़ाते देखकर हम प्रसन्न और चकित तो अवश्य होते है पर इससे अधिक प्रभाव हमारे ऊपर ऊपर उनका नहीं पड़ पाता। हमारे हृदय हमारी आत्मा उनके प्रभाव तथा प्रताप से अछूता ही रह जाता है। मालवीय जी स्वर्गीय देवदूत नहीं सम्पूर्ण मनुष्य थे और यही उनकी मेरी समझ मे सबसे बड़ी खूबी थी। किसी ने ठीक कहा है:

हमने माना हो फरिश्ता शेख जी, आदमी होना मगर दुश्वार है।

सारे देश मे उस समय देश मे अंग्रेजी करण के विरुद्ध जो वाद विवाद छिड़ा हुआ था उस सम्बन्ध मे मालवीय जी की "झक्कड़ सिंह" के नाम से अपने विद्यार्थी जीवन की लिखी हुई इस व्यंगात्मक रस की कविता से हमें उनके मन का अच्छा खासा परिचय मिल जाता है। तत्कालीन जेन्टिलमैनों का वर्णन करते हुये लिखा है:

बदले ड्रेस पूरा जेन्टिलमैन कहलाता है हम।
डोन्ट हे याड हु मी, मिस्टर कहा जाता है हम।।
गंगा जाना, पूजा, जप तप, छोड़ ये पाखंड सब।
छुरने मे मुंह को गिरजाघर मे मिल जाता है हम।।
भांग, गांजा, चरस, चंडू, घर मे छिप छिप पीते थे।
अब तो बेखटके हमेशा बाउन ढरकाता है हम।।
हिन्दुओं का खाना पीना हमको कुछ भाता नहीं।
बीफ चमचे से कटे होटल मे जा खाता है हम।।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

बाबुओं चाचा का कहना लायक हम करता नहीं ।
पापा कहना अपने बच्चों को भी सिखलाता है हम ।।
कोट और पतलून पहने हैट एक सिर पर धरे ।
ईवनिंग में वाक करने पार्क को जाता है हम ।।

वह स्वयं क्या बन रहे थे और क्या बनना चाहते थे इस सम्बन्ध में भी उनकी इस कविता से हमें काफी ज्ञान प्राप्त हो सकता है । लिखा था :

गरे ढाके के अंगरे हैं, पड़ा रंगी दुपट्टा तन ।
भला क्या पूछिये धोती तो ढाके से मँगाते हैं ।।
कभी हम वारनिश पहनें, कभी पंजाब का जोड़ा ।
हमेशा पास डंडा है, ये मनमद सिंह गाते हैं ।।
न ऊधो से हमें लेना, न माधो को हमें देना ।
करें पैदा जो खाते हैं न दुखियों को खिलाते हैं ।।
नहीं डिप्टी बना चाहें, न चाहें हम तहसीलदारी ।
पड़े अलमस्त रहते हैं, यों ही दिन को बिताते हैं ।।
सुनो यारों जो कुछ जोड़ा तो पचड़े से गृहस्थी के ।
छुटे फक्कड़ बना ले जो, वही हमको सिखाते हैं ।।
नहीं रखते हैं फिक्र हमको कि लावें नोन औ लकड़ी ।
मिले तो हलवे बन जावें, नहीं कुरी उड़ाते हैं ।।

"जग बदला, ऋतुयें बदलीं, युग लाया नव सन्देश" पर मालवीय जी नहीं बदले, नहीं बदले । ढाके की स्वदेशी बाद में खद्दर की धोती, दुपट्टा, अचकन और उनकी पगड़ी यावज्जीवन वही रही, वारनिश और पंजाबी जोड़ा भी उनसे न छूटा, छड़ी के रूप में डंडा सदैव उनके हाथ में रहा, डिप्टी और तहसीलदारी की तो बात ही क्या हाई कोर्ट की जजी और वाइसराय की कार्यकारिणी समिति की सदस्यता को भी उन्होंने एक बार नहीं अनेकों बार ठुकरा दिया, गृहस्थी के पचड़े से दूर होकर काशी में राजनैतिक सन्यास लेकर बैठ गये, दूसरों के लिये भीख माँग माँग कर वही भीख माँग कर जिसने उन्हें शान्ति प्रदान की । हिन्दू विश्व विद्यालय की स्थापना की और अपने जीवन की प्रत्येक साँस के साथ देश का समस्त देशवासियों का भला चाहा और किया । अपने लिये अपने घरवालों के लिये उन्होंने क्या किया यह जानना हो तो उनके परिवार के वालों को देख लीजिये और आपको मानना पड़ेगा कि अपने परिवार वालों के साथ उन्होंने यदि अन्याय नहीं किया तो उनके साथ न्याय तो किसी

हालत मे उन्होंने किया ही नहीं । उनका कौल था :

"मरि जाऊँ मांगु नहीं अपने हित के काज ।

परकारज हित मांगिबे,मोहि न आवे लाज ।।"

और अपने इस कौल को उन्होंने यावज्जीवन निबाहा भी ।

मैंने देश की तत्कालीन परिस्थिति और स्वयं मालवीय जी की पारिवारिक स्थिति की यह झांकी दिखलाकर आपका इतना समय लिया । इसका एक मात्र कारण यह है कि इन सबका मालवीय जी के जीवन पर अत्यधिक प्रभाव था और आगे चलकर जो कुछ भी जिस किसी क्षेत्र मे भी उन्होंने किया,उनके समस्त कार्य कलापों मे, वह प्रभाव मूल रूप से कार्य करता रहा । यह सब कहने का एक कारण और भी था और वह यह कि मालवीय जी का वास्तविक क्षेत्र राजनीति नहीं था । न वह शिक्षा शास्त्री थे । वह थे मूलत: एक धार्मिक समाज सुधारक,उस कोटि के जिस कोटि का एक ही उदाहरण हमारे हाल के पुराने इतिहास मे देखने मे आता है और वह है प्रात: स्मरणीय भगवान शंकराचार्य जी महराज का ।

देश का यह अभाग्य है कि आज जब देश मे छोटे छोटे त्यौहारों, जयन्तियों पर छुट्टियां दी जाती है और उन्हें धूम धाम से मनाया जाता है उस समय हम अपने इस महान तम उद्धारक,विचारक और श्रेष्ठतम विभूति को एक प्रकार से भूल से रहे है । अपना अपना पंथ चलाने वाले भगवान बुद्ध और तीर्थंकर महावीर जी की जन्म तिथियां मनाई जाती है पर जिस महान आत्मा ने बिना कोई नवीन पंथ चलाये हुये समस्त हिन्दू जाति मे प्राण फूंके, हमारी प्राचीन सभ्यता की रक्षा की, हमे जीवन दान देकर हमारा भाल समस्त संसार के समक्ष ऊंचा किया, वेदान्त जैसी अमूल्य निधि हमे दी,उसे हम आज भूल से रहे है । क्यों ? शायद इसलिये कि उन्होंने अपना कोई नया पंथ नहीं चलाया और स्वयं अवतार होने का ढोंग नहीं रचा ।

मालवीय जी को मै इस युग का शंकराचार्य मानता हूं और मानता हूं कि यदि देश गुलाम न होता,वह स्वतंत्र होता तो मालवीय जी केवल शंकराचार्य के रूप मे ही हमारे सामने आते और हम सब उनकी उसी रूप मे पूजा करते । देश की तत्कालीन राजनैतिक अवस्था मे उन्हें राजनीति मे जबरदस्ती पड़ना पड़ा और गुलामी तथा तज्जनित अनेक आधियों व्याधियों के त्राता के उनके रूप ने उनके असली रूप को बहुत कुछ गौण सा कर दिया । बड़ी पुरानी और प्रसिद्ध कहावत है कि इतिहास अपने को दुहराया करता है । इस कथन मे मेरा पूर्ण विश्वास है।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

मै मानता हूँ कि आज हम अपने इतिहास के उस स्थल पर आ खड़े हुये है जहाँ बौद्ध तथा जैन धर्मों का ब्राह्मणों के कर्मकांड की प्रतिक्रिया स्वरूप, अभ्युदय हुआ था। बीच के राजनैतिक पराधीनता और तज्जनित मानसिक गुलामी के अध्याय को हम समाप्त कर चुके है। आज हमे भगवान शंकराचार्य तथा मालवीय जी जैसे महान् व्यक्तित्व की एक बार पुनः आवश्यकता है जो सारे समाज को फिर एक सूत्र मे पिरोकर उसे एक नई, सुन्दर, धार्मिक तर्क तथा न्यायसुक्त और स्थायी व्यवस्था प्रदान कर सके। और ऐसा होगा इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। आप द्वारा आयोजित यह उत्सव वर्तमान अन्धकार पूर्ण वातावरण मे प्रकाश की एक क्षीण रेखा के समान ही मुझे मालूम होता है।

उस समय के देश के नेताओं के सामने एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह भी था कि स्वतंत्रता प्राप्त होने पर देश मे राज्य किसका हो और उसका रूप कैसा हो। इतिहास के इस तथ्य को छिपाने से कोई लाभ नहीं कि मुस्लिम काल मे समस्त हिन्दुओं ने स्वेच्छापूर्वक मुस्लिम शासन स्वीकार कभी नहीं किया था। इसके विपरीत सत्य बात यह है कि हिन्दुओं मे दो दल हो गये थे जैसा होना ऐसी अवस्था मे बिल्कुल स्वाभाविक था। एक सहयोगियों का, दूसरा असहयोगियों का। प्रथम महान मुस्लिम शासक सम्राट अकबर के समय मे ही देश दो दलों मे बंट गया था। सहयोगी दल का नेतृत्व किया। कछवाहा नरेश राजा भगवान दास, उनके पुत्र मानसिंह इत्यादि ने जो बहुमत मे था और असहयोगियों का नेतृत्व किया राणा प्रताप ने। सहयोगी दल भी हिन्दुत्व विहीन न था। उसने अपनी लड़कियों का विवाह मुस्लिम सम्राटों के साथ किया था तो इस आशा और विश्वास मे कि हमारे कुल का नाती ही भावी सम्राट होगा और वह उतना कट्टर मुस्लिम न होगा कि हिन्दुओं को काफिर और हेय समझे। इसीलिये शाहजहाँ के काल तक गाड़ी किसी तरह चलती रही। हिन्दुओं के प्रिय तथा उनके द्वारा समर्थित राजकुमार दारा शिकोह की निर्मम हत्या और औरंगजेब के कुशासन से असहयोगी हिन्दू दल को नया बल मिला। हिन्दू नेता इन बातों को भूले नहीं थे। वह अंग्रेजों को हटाना जरूर चाहते थे, साथ ही उन्हें इसकी भी चिन्ता थी कि कहीं ऐसा न हो कि स्वतंत्र होने के बाद हम फिर मुसलमानों के गुलाम बन जायं।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

इस सत्य की ओर से आँखे फेरना और केवल यह कहना कि हिन्दू मुसलमान तो एक थे, झगड़ा अंग्रेजों का कराया हुआ था और हिन्दू मुस्लिम झगड़े की सारी जिम्मेदारी केवल ब्रिटिश सरकार की थी, अपने को धोखा देना है।

अंग्रेजों ने हिन्दुओं और मुसलमानों के पारस्परिक अविश्वास को बहुत अधिक बढ़ावा दिया और दोनों को लड़ाकर उनके एक होने के मार्ग मे बाधायें देकर अपना उल्लू सीधा किया, यह कहना अधिक सत्य होगा। यह सही है कि मुसलमानों से हिन्दुओं को अधिक डर नहीं रह गया था। भारतीयता की रक्षा की आवश्यकता उस समय अंग्रेजियत और ईसाइयत के हमले से ही अधिक थी। ईसाइयत से झगड़ा मुसलमानों को भी खटका था और इसीलिये १८५७ के गदर या स्वतंत्रता संग्राम मे दोनों ही एक हो गये थे। सम्राट बहादुर शाह ने समस्त राजाओं को पत्र लिखकर यह विश्वास दिलाया था कि फिरंगियों को देश से निकाल बाहर करने के बाद अपने खानदान वालों के लिये दिल्ली की गद्दी सुरक्षित करने की उनकी कतई इच्छा नहीं है। अंग्रेजों को निकालने के बाद उनको स्वतंत्रता होगी कि वह चुनाव द्वारा जिसे चाहें उसे दिल्ली की गद्दी पर बिठलायें। और इसी आश्वासन पर हिन्दू भी सम्राट के झंडे के नीचे मुसलमानों के साथ कंधे से कंधा भिड़ाकर लड़े। पर हमे यह भी न भूलना चाहिये कि बावजूद सारी बातों के बंगाल, मद्रास, पंजाब तथा नेपाल इत्यादि ने इस स्वातंत्र्य संग्राम मे कोई हिस्सा नहीं लिया और लिया भी तो अंग्रेजों के पक्ष मे लिया। अंग्रेजियत का प्रचार भी इसीलिये उपर्युक्त प्रान्तों मे पहले हुआ और यहाँ के हिन्दू अंग्रेजों के विशेष कृपा पात्र बने।

खैर, १८५७ के बाद मुसलमान अंग्रेजों के विशेष कोपभाजन बने और कृपापात्र विशेषकर उन प्रान्तों के हिन्दू जहाँ उन्होने अंग्रेजों मुसलमानों मे अपने धर्म के प्रति कट्टरता भी हिन्दुओं से अधिक होती है। स्वभावतया वह अंग्रेज और अंग्रेजियत या ईसाइयत के अधिक विरुद्ध थे। उनमे धार्मिक कट्टरता तथा संगठन काफी था। फल यह हुआ कि जब प्रारम्भ प्रारम्भ मे अंग्रेजों ने देश मे अंग्रेजी शिक्षा और उस शिक्षा के द्वारा अंग्रेजियत का प्रचार और प्रसार प्रारम्भ किया तो मुसलमान उससे महरूम रह गये।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत
National Archives of India

देव बन्द के उल्माओं ने हिन्दु पंडितों के "नपठेत यावनी भाषाम्" की नकल पर फतवा निकाल दिया कि मुसलमान अंग्रेजी न पढे। पर हिन्दुओं ने अंग्रेजी शिक्षा से काफी लाभ उठाया, उनके विचारों मे अंग्रेजियत की छाप अधिक आने लगी और फलत: सरकारी दफ्तरों मे भी अधिक संख्या उन्हीं की रही। यह दशा देखकर मुसलमान भी चौंके और आगे चल कर उनमे एक दल सर सैयद अहमद खाँ के नेतृत्व मे ऐसा पैदा हुआ या किया गया जो अंग्रेजों से समझौता करने का पक्षपाती बना। अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी और मुस्लिम लीग की स्थापना के मूल मे मुसलमानों की यही भावना थी।

जैसा कि मै ऊपर विस्तार पूर्वक लिखा चुका हूं। हिन्दुओं मे बढ़ती हुई ईसाइयत या अंग्रेजियत की रोक थाम आवश्यक थी और हिन्दु नेता इस ओर विशेष रूप से सतर्क थे। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार का दूसरा फल यह हुआ कि हिन्दुओं मे स्वतंत्रता की भावना भी अधिक बढ़ने लगी, और इन सबका नतीजा हुआ सन् १८८५ मे कांग्रेस की स्थापना के रूप मे।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

सन् १८८६ मे अर्थात् व्दितीय कांग्रेस के समय मालवीय जी प्रथम बार कलकत्ता कांग्रेस मे सम्मिलित हुये। उसमे उन्होने व्याख्यान भी दिया और उसी कांग्रेस ने सारे भारतवर्ष से उनका परिचय कराया। यही राष्ट्रीय महासभा मेरी सफलता की पहली सीढी थी, ऐसा वह प्रायः कहा भी करते थे। इसी कांग्रेस से उनका वह प्रसिद्ध वाक्य सारे देश मे गूंज गूंज कर प्रतिध्वनित हुआ था कि "प्रतिनिधित्व नहीं तो कर भी नहीं" अंग्रेजों की राजनैतिक बाइबिल का यह पहला आदेश है।

और यह कि बिना प्रतिनिध सत्तात्मक संस्थाओं के अंग्रेज क्या रह जाते है? कुछ भी नहीं, केवल एक ढकोसला। १९०८ तक राजनैतिक क्षेत्र मे हम मालवीय जी को कांग्रेसी और एक मात्र राष्ट्रीय रूप मे देखते है। धार्मिक क्षेत्र मे सनातन धर्म सभा और राजनैतिक क्षेत्र मे कांग्रेस यही दो संस्थायें उनका कार्य क्षेत्र थीं। बाद मे हिन्दु महासभा भी।

ज्यों ज्यों कांग्रेस इसमे जुड़ गई जो उनकी सामाजिक सेवाओं का कार्यक्षेत्र रही, की राजनैतिक मांगे बढती गयी और उसका प्रभाव बढता गया, त्यों त्यों सरकार व्दारा उसका विरोध भी बढने लगा। सरकार को चिन्ता हुई। कांग्रेस देश की समस्त राजनैतिक शक्तियों का एक स्थान पर केन्द्रित करना चाहती थी। सरकार ने इसे अपने लिये खतरे का घंटा समझा। उसने देश की शक्तियों को केन्द्रित न होने देने और विशृंखलित करने के उद्देश्य से मुसलमानों, उन मुसलमानों को, जिनसे उसने हाल ही मे राज्य छीना था और जिन्हें यह काफी दिनों तक शंका और भय की दृष्टि से देखती थी, अपने साथ करना चाहा। सर सैयद अहमद खाँ जो शुरू से महान् राष्ट्रीयता वादी थे और हिन्दु तथा मुसलमानों को भारतमाता की दो आँखें कहा करते थे उन्हें मिलाकर ढाका के नवाब शमी उल्ला खाँ की सहायता से मुस्लिम लीग की स्थापना कराई गयी और सर सैयद व्दारा मुसलमानों को कांग्रेस से अलग रहने की सलाह दिलवाई गयी। बंगाल का बंगभंग किया गया। बंगाली मुसलमानों को मिलाने के लिये पर बंग भंग आन्दोलन ने सरकार को झुकने पर मजबूर कर दिया।

इस समय कांग्रेस मे भी दो दल हो गये। एक दल के नेता थे महामान्य गोखले जो उपलिखित देश की दो प्रमुख विचार धाराओं मे इस विचार धारा का प्रतिनिधित्व कर रहे थे कि सामाजिक

के बिना राजनैतिक सुधार बेमानी है । पहले राजनैतिक स्वतंत्रतावाद मे राजनैतिक सुधार वाली विचारधारा का नेतृत्व कर रहे थे लोकमान तिलक । स्वभावतया राजनैतिक दृष्टि से सामाजिक सुधारवादी मन्दगति से चलने के पक्षपाती थे । समाज सुधार का रचनात्मक कार्य करने वाले बहुत तेजी से चल भी नहीं सकते । देश दो प्रमुख विचार धाराओं मे बंटा हुआ था । लाल बाल पाल "गर्मदल" के नायक कहे जाते थे और कांग्रेस पर महामान्य गोखले और उनके साथियों का प्राधान्य था । गोखले जी भारत और इंगलैंड के सम्बन्ध को भारत के हित मे मानते थे । लोकमान्य तिलक इसके विपरीत [illegible] उस सम्बन्ध को अनैतिक मानते थे और यदि टूट सके तो तुरन्त तोड़ फेंकना चाहते थे । एक विकासवादी था, दूसरा क्रान्तिकारी पर थे दोनों ही ईमानदार और दोनों का ही उद्देश्य एक और पवित्र था । जब कि बाहरी तौर पर इन दोनों दलों मे अत्यधिक झगड़ा दिखलाई पड़ता था भीतर से वह सब एक दूसरे के प्रति अत्यन्त आदर भाव रखते थे । इस सम्बन्ध मे एक घटना बहुत मशहूर है । महामान्य गोखले जी को दक्षिण अफ्रीका मे चलाये जाने वाले युद्ध के लिये गांधी जी को रुपये भेजने थे । उन्होंने लाला लाजपत राय जी से कहा कि पंजाब से दस हजार रुपये दिलवाइए । लाल जी ने कहा दस नहीं बीस हजार दूंगा पर आपको कष्ट कर पंजाब एक बार आना पड़ेगा । अभी तक आप पंजाब कभी नहीं आये । कब आइएगा ? गोखले जी ने कहा कल चलते । लाला जी को बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि उस समय गोखले जी का स्वास्थ्य अत्यन्त खराब था और वह इतनी लम्बी यात्रा करने मे बिलकुल अशक्य थे । लाला जी ने बहुत समझाया पर गोखले जी माने नहीं । पंजाब गये । स्टेशन पर लाला जी ने गोखले जी का महान स्वागत किया । गोखले के लाख आग्रह करने पर भी वह उनकी बगल मे न बैठकर गाड़ी मे कोचवान की जगह बैठे । सायंकाल की सार्वजनिक सभा मे लाला जी ने गोखले जी की भूरि भूरि प्रशंसा की और उन्हें देश भक्तों का सिर मौर बतलाया । यह बात लाला जी के नौजवान भक्तों और साथियों को बहुत बुरी लगी । सभा के बाद एकत्रित होने पर उन्होंने लाला जी को उलाहना दिया कि एक नर्मदलीय [illegible] विपक्षी दल के नेता की इतनी अधिक प्रशंसा और उसका इतना सम्मान उन्हें नहीं करना चाहिये था । लाला जी ने उत्तर मे कहा था, तुम लोग गलत समझते हो । गोखले जी के हृदय मे देश भक्ति की आग हमसे कहीं अधिक प्रचंड रूप मे सुलगती रहती है । किन्तु उनका मस्तिष्क

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

समान ठंडा है और वाणी का तो कहना ही क्या ? उससे सदा फूल ही झड़ा करते हैं इसलिये तुम सब उन्हें नर्म दल वाला कहते हो। देशभक्ति की आग मेरे हृदय मे भी जलती है पर मेरे मस्तिष्क मे ठंडक नहीं। वह बहुत गर्म है और वाणी पर तो मुझे कोई अधिकार ही नहीं है। जो जी मे आता है वही बक जाता हूँ इसलिये तुम लोग मुझे गर्म दल वाला कहते हो। इससे गोखले की महत्ता मुझसे अधिक ही ठहरती है, कम तो किसी प्रकार होती ही नहीं। महामान्य गोखले जी की मृत्यु पर उनके सबसे बड़े विरोधी तिलक जी ने कहा था, "गोखले देश भक्तों मे राज कुमार थे। उनका यथानुसरण करो।" लाला लाजपत राय जी के देश निष्काशन पर सबसे अधिक विरोध किसने किया था, आप जानते हैं ? नर्मदलीय नेता गोखले जी ने। इन नेताओं से जरा आज के अपने नेताओं से तो तुलना कीजिये तब आपको ज्ञात होगा कि हम उन्नति कर रहे है या नीचे जा रहे है। खैर मै कहाँ का कहाँ चला जाता हूँ। हाँ तो पूज्य मालवीय जी इन दोनों विचारधाराओं और दलों की टकराहट के बीच बिना इधर या उधर झुके हुये एक प्रकाश स्तम्भ की तरह अडिग खड़े रहे। कांग्रेस का साथ उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। जब गरम दल वाले कांग्रेस को छोड़कर अलग हुये उस समय भी वह कांग्रेस से अलग नहीं हुये और न उस समय ही उन्होंने कांग्रेस का साथ छोड़ा। जब कि नरम दल वालों ने कांग्रेस का त्याग कर अपनी नरम दलीय संस्था बनाई। कांग्रेस मे जब गांधी जी का बोलबाला हुआ तब भी वह कांग्रेस मे ही बने रहे और अकेले रहते हुये तथा कांग्रेस की तत्कालीन कुछ नीतियों से महत विरोध रखते हुये भी उन्होंने कांग्रेस का साथ नहीं छोड़ा। साथ ही अपनी आत्मा की पुकार पर उन्होंने कभी किसी की प्रसन्नता अथवा अप्रसन्नता की परवाह भी नहीं की।

सन् १९१० मे तत्कालीन कांग्रेस के सर्वे सर्वा गोखले जी से प्रेस ऐक्ट के सम्बन्ध मे उनका मतभेद हो गया। गोखले जी प्रेस ऐक्ट का समर्थन कर रहे थे। मालवीय जी पर उनका अनन्य प्रेम भाव था और वह आग्रह कर रहे थे कि मालवीय जी प्रेस ऐक्ट का विरोध कर सरकारी आँखों का काँटा न बने। मालवीय जी की विचित्र मनोदशा थी। एसेम्बली हाल मे बैठे ही बैठे उन्होंने गजेन्द्र मोक्ष का पाठ किया और अपनी आत्मा की प्रेरणा के अनुसार जब वह बोलने खड़े हुये और उन्होंने कहा

तो सारे एसेम्बली हाल मे सन्नाटा छा गया । गोखले जी उनका मुंह ताकने लगे और समय ने सिद्ध कर दिया कि मालवीय जी ही उचित रास्ते पर थे ।

ऐसे ही प्रथम योरोपीय महायुद्ध छिड़ने पर भारत द्वारा ग्रेट ब्रिटेन की सहायतार्थ दस करोड़ रुपये देने का प्रस्ताव कौंसिल मे पेश हुआ । महामान्य गोखले जी तथा महात्मा गांधी इत्यादि नेता इस प्रस्ताव के पक्ष मे थे । महात्मा गांधी जी तो युद्ध मे सहायता देने के उद्देश्य से सेना मे भर्ती करा रहे थे । उस समय भी पूज्य मालवीय जी ने उक्त प्रस्ताव का विरोध करते हुये एसेम्बली मे कहा था:

१९१९ मे रौलटेबिल पास होने पर भारतीय सदस्यों मे केवल दो सदस्य पूज्य मालवीय जी और कायदे आजम जिना ने कौंसिल से विरोध स्वरूप अपने स्तीफे दिये थे । पंजाब हत्याकांड के बाद सरकारी अफसरों को उनके कुकृत्यों से मुक्ति देने के उद्देश्य से सरकार ने कौंसिल मे नामक एक बिल पास

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

किया था । मालवीय जी ने इसका तीव्र विरोध किया । वह लगातार चार घंटे तक इस बिल के विरोध मे बोले थे और उनके महत्वपूर्ण तथा महान् भाषणों मे उसकी गणना है । पूज्य महात्मा गांधी जी उक्त सरकारी बिल के पक्ष मे थे । जब मालवीय जी बोल रहे थे उन्हें टोकते हुये तत्कालीन गृह सदस्य सर विलियम विन्सेन्ट ने कहा, "मै समझता हूँ कि कौंसिल उन महात्मा के विचारों को जानना चाहती होगी जिन्होंने उपद्रव शान्त करने के लिये किये गये सरकारी उपायों का समर्थन किया है । उनका नाम है महात्मा गांधी । मेरी समझ मे अफसरों को मुक्ति देने के प्रश्न पर सरकार ने जो कुछ करने का प्रस्ताव किया है उससे भी अधिक गांधी करते । पंडित मालवीय ने मि० गांधी का उल्लेख अत्यन्त वजनदार कहकर किया है इसलिये मै समझता हूँ उनकी राय पर वह उचित ध्यान दें ।" मालवीय जी ने तुरन्त उत्तर मे कहा, "मेरे लिये इस प्रस्ताव का विरोध करना ही आवश्यक है । निर्वाचित सदस्य की हैसियत से मुझ पर जो दायित्व है उसी के अनुसार मैने ऐसा किया है । बिल पर विचार उसके गुण के अनुसार होना चाहिये । मि० गांधी की राय विचार करने योग्य है परन्तु उससे भी ऊँची एक शक्ति है जिसके सामने हमे सर झुकाना चाहिये । वह शक्ति है अपने विवेक की शक्ति अपने आत्मा की आज्ञा । यह वही उच्च और महान शक्ति है जिसने इस बिल का उसके वर्तमान रूप मे, विरोध करने पर मुझे बाध्य किया है । हमे सन्तोष है कि माननीय गृह सचिव ने महात्मा गांधी का इन शब्दों मे इस तरह उल्लेख किया ।"

इन पंक्तियों मे मालवीय जी की आत्मा का सच्चा दर्शन होता है । गांधी जी की राय विचारणीय है किन्तु उससे भी ऊँची एक शक्ति है अपने विवेक की अपने आत्मा की ।

सन् १९०७ मे बंगभंग तथा स्वदेशी आन्दोलनों से घबराकर सरकार ने खुलकर मुसलमानों को मिलाने की नीति अख्तियार की । बंगाल और आसाम के तत्कालीन गवर्नर सर बमफाइल्डफुलर ने अपने एक सार्वजनिक भाषण मे खुलकर कहा " मेरे दो पत्नियां [illegible] है ।" एक हिन्दू और दूसरी मुसलमान । लेकिन उनमे से छोटी अर्थात् मुसलमान मुझे अधिक प्रिय है ।" तत्कालीन वाइस राय लार्ड मिन्टो के चरित्र कार जान बुकन ने लिखा है कि लार्ड मिन्टो को मुसलमानों से अधिक प्रेम था । तत्कालीन भारत मन्त्री लार्ड मार्ले ने लार्ड मिन्टो के मुस्लिम प्रेम को देखकर उन्हें लिखा था तुमने मुसलमान खरगोश को

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

भड़काया पर हमे इस बात का ख्याल रखने की जरूरत है कि मुसलमानों को साथ लेने की धुन मे कहीं हमारी हिन्दू गठरी छूट न जाय।

देश के राजनीतिज्ञों के सामने कठिन समस्या आ गई। लोकमान्य तिलक का कहना था हम अपनी लड़ाई लड़े जांय,मुसलमान साथ आये तो बहुत अच्छा,न आये तो भी कोई हर्ज नहीं। महात्मा गोखले मुसलमानों को साथ लाने का भरसक प्रयत्न कर रहे थे। कायदे आजम जिना उन्हीं के द्वारा कांग्रेस मे लाये गये थे। जिना साहब ने एक बार कहा था कि मेरी सबसे ऊंची आकांक्षा यह है कि मै मुसलमानों का गोखले बनूं। भारतीय इतिहास की यह भी एक अनोखी घटना है कि कायदे आजम जिना और महात्मा गांधी दोनों ने ही महात्मा गोखले को अपना राजनैतिक गुरु माना है। दोनों ही गुजराती बनिये, दोनों ही बैरिस्टर यही नहीं, दोनों एक दूसरे से इतने अलग,इतने विरोधी कि देश का नकशा ही इन्होने बदल दिया। युग युगान्तर से अखंड चला आया भारत खंडित हो गया। दोनों ने ही अपनी अपनी नीतियों का परिणाम अपने जीवन काल मे ही देख लिया और थोड़े ही दिनों के अन्तर मे दोनों ही , निश्चय ही दुःखी मन लिये हुये, इस संसार से विदा हो गये।

जैसा मैंने ऊपर कहा है, पूज्य मालवीय जी लोकमान्य तिलक और महात्मा गोखले दोनों दलों के बीच की कड़ी या संगम थे। इन्होने उस ओर निहारा और मालवीय जी ने उसे कभी निराश भी नहीं किया। ७५ वर्ष की अवस्था मे १९३२.३३ के गैर कानूनी कांग्रेस के अधिवेशनों का सभापतित्व करने के लिये तैयार होना कोई साधारण बात न थी। बम्बई कांग्रेस के अवसर पर कांग्रेस के दोनों दलों मे जब भीषण मतभेद हो गया उस समय देश ने १९१८ की दिल्ली कांग्रेस का सभापति एक मत से मालवीय जी महराज को चुना। देश पर जब कभी विपत्ति आई घरेलू या बाहरी उसने कांग्रेस के सभापतित्व के लिये मालवीय जी को ही धार्मिक दृष्टि से वह लोकमान्य के नजदीक थे और राजनैतिक दृष्टि से महात्मा गोखले के पर सम्पूर्ण रीति से वह किसी भी दल मे कभी नहीं रहे। श्रीमती एनीबेसेन्ट के शब्दों मे विभिन्न मतों के बीच केवल मालवीय जी ही भारतीय एकता की मूर्ति बने खड़े हुये है यह मै दावे के साथ कह सकती हूं।

महात्मा गोखले के साथ उनके मत भेदों की चर्चा मे ऊपर कर चुका हूं। एक बार उनका भीषण मतभेद लोकमान्य तिलक के साथ भी हो गया और ऐसा हुआ कि भारत के राजनैतिक इतिहास के पृष्ठों पर उसकी अमिट छाप सदा सर्वदा के लिये पड़ गई।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

१९१६ मे बहुत दिनों तक कांग्रेस से अलग रहने के बाद लोकमान्य तिलक पुन: कांग्रेस मे सम्मिलित हुये । १९१६ की लखनऊ कांग्रेस का भारतीय राजनीति मे एक विशेष स्थान है । इसी कांग्रेस मे कांग्रेस और मुस्लिम लीग मे वह समझौता हुआ जिसके अनुसार कांग्रेस ने मुसलमानों की पृथक निर्वाचन प्रणाली की मांग को स्वीकार किया था । लोकमान्य तिलक के संस्मरणों की एक पुस्तक उनके देहावसान के बाद प्रकाशित हुयी थी । उन दिनों के एक प्रसिद्ध राजनैतिक नेता श्री सी०एस० रंगास्वेयर ने लोकमान्य सम्बन्धी अपने संस्मरण मे उक्त लखनऊ कांग्रेस का जो वर्णन किया है उसे मै आपको सुनाये देता हूं ।

"मुझे [illegible]खनऊ कांग्रेस के समय, जब नरम दल, गरम दल हिन्दु तथा मुसलमान, जब सभी आवश्यकता से अधिक उत्तेजित थे, उस समय की लोकमान्य तिलक की शान्त मुद्रा अब भी अच्छ याद है । नरम दल वाले असन्तुष्ट थे गरम दल वालों के अधिक आगे बढ़ जाने के कारण और हिन्दु तथा मुसलमान साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के प्रश्न त[illegible] पैक्ट की वजह से उत्तेजित थे । पंडित मदन मोहन मालवीय विशेष चिन्तित दिखलाई देते थे । वह कभी भी पैक्ट को कबूल करने पर अपने को राजी नहीं कर सकते थे । उन हिन्दुओं को जो उनके कुर्सीत के वक्त उन्हें घेरे रहते थे उन्होंने विश्वास दिलाया था कि मुसलमानों के सामने कांग्रेस के झुक जाने पर अगर आवश्यकता समझी गयी और यदि उन्हें उचित प्रतीत हुआ तो वह कांग्रेस के खिलाफ जोरदार आन्दोलन करेंगे । महाराष्ट्र के सनातन धर्मी नेता :स्व० लोकमान्य तिलक: हिन्दुओं मे सबसे अधिक धार्मिक और वेदों के ज्ञाता थे उन्होंने पैक्ट के खिलाफ एक शब्द भी सुनने से इंकार कर दिया था । जहां तक हिन्दुओं का सम्बन्ध था । लोकमान्य तिलक के रुख ने मामले का फैसला कर दिया था और यही इस मसले पर अन्तिम शब्द था । पं० मदन मोहन मालवीय ने भी, जिन्हें यह जबर्दस्त शक था कि ज्यों ही मौका आयेगा मुसलमान फौरन ही अधिक मांगे पेश करना शुरू कर देंगे, लोकमान्य तिलक की बात मान ली और कांग्रेस के खिलाफ कोई भी आन्दोलन नहीं किया ।"

जब लोकमान्य तिलक ने ही लखनऊ पैक्ट का समर्थन कर दिया था तो उदार दल वालों का तो कहना ही क्या ? श्रीमती सरोजनी नायडू ने गोखले जी सम्बन्धी अपने संस्मरण मे लिखा है कि "जब मैने गोखले जी को मुस्लिम लीग द्वारा पहले पहल "स्वाराज्य" का आदर्श स्वीकृत किये जाने की खबर सुनाई तो इस समाचार ने [illegible]

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

इतना अधिक प्रफुल्लित और उत्सुक बना दिया था कि वह उस खुशी मे अपनी व्यक्तिगत पीड़ा को बिलकुल भूल गये और बार बार यह पूछते थे कि क्या यह समाचार सत्य है, क्या मुसलमान फिर पलट न जायेंगे ? मेरे आश्वासन दिलाने पर लीग के सम्बन्ध मे छोटी से छोटी बात को उन्होंने मुझसे पूछा । कहने का अर्थ यह कि राजनैतिक अवसर वादिता पर सिद्धान्तों को बलि करने के विरुद्ध देश के राजनैतिक प्रांगण मे उस समय एक ही आवाज गूंज रही थी और वह थी मालवीय की जो उस समय सुनी नहीं गई किन्तु जिसका प्रतिफल आज भी देश भोग रहा है और मालूम नहीं कब तक भोगेगा ।

श्री रंगास्वामी के संस्मरण मे एक ही बात ऐसी है जिसके सम्बन्ध मे थोड़ा सा खुलासा करने की आवश्यकता है। यह सही है कि लोकमान्य तिलक के अनुरोध पर मालवीय जी ने कांग्रेस लीग पैक्ट के विरुद्ध कोई आन्दोलन नहीं किया किन्तु इससे यह समझना नितान्त भ्रामक होगा कि उन्होंने कांग्रेस द्वारा अपनाई गई मुसलमानों को सिद्धान्तों की बलि देकर भी प्रसन्न करने की अवसरवादी नीति के सामने भी सर झुका दिया था । यह बात उसी वर्ष की निम्नलिखित घटना से प्रत्यक्ष हो जाती है ।

युक्त प्रान्तीय कौंसिल मे महराज कुमार जहांगीराबाद ने म्युनिसिपैलिटियों मे प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध मे एक उप प्रस्ताव पेश किया था और जिसे सरकार ने भी स्वीकार कर लिया था । उसमे न केवल मुसलमानों के साथ अनुचित पक्षपात ही किया गया था वरन् हिन्दुओं को उनकी राष्ट्रीयता के लिये सजा भी दी गयी थी । उक्त जहांगीराबादी उप प्रस्ताव का असर प्रयाग नगर पर क्या पड़ता था इसे समझ लीजिये । प्रयाग म्युनिसिपैलिटी के लिये कुल २६ स्थान रक्खे गये थे । इस २६ स्थानों मे गैर मुस्लिमों को १३ स्थान दिये गये थे, मुसलमानों को ८, सरकार द्वारा नियुक्त दो और तीन सरकार द्वारा स्वीकृत संस्थाओं के प्रतिनिधि । सरकार द्वारा स्वीकृत संस्थायें थीं ईस्ट इंडियन रेलवे, ऐंग्लो इंडियन एसोसियेशन तथा प्रयाग विश्व विद्यालय । सरकार या सरकार द्वारा स्वीकृत संस्थाओं के प्रतिनिधि अधिकार सरकार के समर्थक होंगे ऐसी आशा की जाती थी । जो १३ स्थान गैर मुस्लिमों को दिये गये थे उसमे भी कम से कम ४ सरकार समर्थक अहिन्दुओं को मिलेंगे यह भी जानी बूझी बात थी क्योंकि सिविल लाइन वार्ड मे म्योराबाद तथा सिविल लाइन शामिल थे जहाँ उस समय अहिन्दू निवासियों की

संख्या अधिक थी यद्यपि सारे शहर की जन संख्या के अनुपात की दृष्टि से उस समय इस नगर मे ६६.८३ प्रतिशत हिन्दू, ३०.०२ प्रतिशत मुसलमान तथा ३.१५ प्रतिशत अन्य जातियों के लोग थे। उक्त जहाँगीराबादी प्रस्ताव के फलस्वरूप म्युनिसिपैलिटी मे ६६.८३ प्रतिशत हिन्दुओं के ६ प्रतिनिधि, ३०.०२ प्रतिशत मुसलमानों के ८ प्रतिनिधि और ३.१५ प्रतिशत अन्य जातियों के ६ प्रतिनिधि चुने जाते।

सारे प्रान्त मे ऐसा ही हिसाब किताब रक्खा गया था। उस समय के प्रयाग के प्रतिष्ठित नागरिक महामान्य डाक्टर सर तेज बहादुर सप्रू और पं० मोती लाल जी नेहरू उक्त प्रस्ताव का समर्थन कर रहे थे। विरोध मे केवल एक ही आवाज थी और वह थी मालवीय जी की और उनके सहायक थे इस नगर के उस समय के उनके नौजवान साथी स्वर्गीय चिन्तामणि जी, पं० कृष्णकान्त जी मालवीय और राजर्षि बाबू पुरुषोत्तम दास जी टंडन। घमासान युद्ध छिड़ा। आगे चलकर स्वराज्य पार्टी ने जिस असहयोग की नीति को कौंसिलों मे बर्ता वह नीति इन्हीं दिनों मे पूज्य मालवीय जी द्वारा जहाँगीराबादी उप प्रस्ताव के अन्तर्गत होने वाले म्युनिसिपल चुनावों मे कार्य रूप मे बर्ती गयी थी। इसी अनुभव ने शायद उन्हें आगे चलकर कौंसिलों के बायकाट का विरोधी बना दिया था। जयचन्द और मीरजाफरों की कमी तो इस देश मे कभी रही नहीं। कुछ सरकारी म्युनिसिपैलिटियों की सदस्यता के लिये हिन्दू स्थानों से भी खड़े हो ही जाते थे। मालवीय जी ने इसीलिये म्युनिसिपैलिटियों का सम्पूर्ण बायकाट नहीं किया। उनके दल के लोग चुनावों मे खड़े होते थे, सरकारी लोगों को हराते थे और चुने जाकर स्तीफा दे देते थे। इससे इतना तो हुआ कि सरकार को बारबार चुनाव कराने पड़े, उस पर हिन्दुओं का रोष प्रकट हुआ, वह झुकी भी, पर इस आन्दोलन से यह भी प्रकट हो गया कि म्युनिसिपैलिटियों का चलना असम्भव कर देना सम्भव नहीं है इसलिये सरकारी संस्थाओं के चुनावों मे भाग लेना और अन्दर घुसकर अल्पमत मे रहते हुये भी अपनी लड़ाई को वहाँ जारी रखना ही अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण है ऐसा मालवीय जी का मत बन गया।

पर उपर्युक्त विवरण से कोई यह न समझे कि मालवीय जी साम्प्रदायिक थे जैसा कि उनके विरोधियों ने उन्हें बदनाम करने के लिये बार बार प्रचारित किया है। मालवीय जी ने धार्मिक कार्यों के लिये सनातन धर्म सभा, सामाजिक कार्यों के लिये हिन्दू महासभा और राष्ट्रीय कार्यों के लिये कांग्रेस को अलग अलग अपना क्षेत्र बनाया था। यह तीनों सभायें एक दूसरे की विरोधी नहीं बल्कि प्रति[illegible]

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

मालवीय जी की आत्मा को अकबर पहचानते थे। वह मानते थे कि मालवीय जी एक कट्टर हिन्दु है और एक कट्टर हिन्दु और एक कट्टर मुसलमान में ही सच्ची मित्रता हो सकती है, वह स्थायी भी तभी होगी किन्तु दो लामजहबों और बेईमानदार लोगों की मित्रता न सच्ची हो सकती है न स्थायी। हिन्दु मुस्लिम ऐक्य के मालवीय जी कितने हामी थे यह आप इसी बात से समझ सकते हैं कि महात्मा गांधी जी ने जब हिन्दु मुस्लिम ऐक्य पर जोर दिया तो अकबर समझे कि ऐसा गांधी जी मालवीय जी की सलाह से ही कर रहे हैं। गांधी नामे में ही उन्होंने लिखा है।

"गांधी ने मान ली है मदन मोहनी सलाह,
हिन्दी तो थे ही अब वह मदनी भी हो गये।।"

१९१८ की कांग्रेस दिल्ली में हुई और दूसरी बार मालवीय जी कांग्रेस के सभापति चुने गये। स्वर्गीय हकीम अजमल खां साहब स्वागत कारिणी समिति के अध्यक्ष थे। इस कांग्रेस में मुसलमानों को लक्ष्यकर मालवीय जी ने यहां तक कह दिया कि "यदि मुसलमान भाइयों को गोवध से ही शान्ति और सुख मिलता हो तो परम् ब्राह्मण और आस्तिक हिन्दु होते हुये भी लाओ मेरे सामने गाय और मेरी आंखों के सामने उसका वध कर दो। आंख से आंसू भले निकलेंगे पर मुंह से उफ न करूंगा।" मुसलमान नेताओं ने भी मालवीय जी की उदारता का उत्तर अपने उदारतापूर्ण वक्तव्य से दिया कि कि आज से मुसलमान भारत में गो वध न करेंगे।

मैं ऊपर ही कह आया हूं कि १९१९ मे रौलट बिल के विरुद्ध बड़े लाट की कौंसिल से केवल दो निर्वाचित प्रतिनिधियों ने ही स्तीफा दिया था और वे दो प्रतिनिधि थे पुज्य मालवीय जी और कायदे आजम जिन्ना। यह सब चल रहा था कि महात्मा गांधी राजनैतिक रंग मंच पर आये और आते ही भारत के तत्कालीन सभी प्रमुख नेताओं की सलाह और इच्छा के विरुद्ध खिलाफत के प्रश्न को हाथ में लेकर और उसके साथ पंजाब हत्याकांड को जोड़कर उन्होंने असहयोग कार्य क्रम की घोषणा की। कांग्रेस द्वारा उन्होंने अपने असहयोग कार्यक्रम को स्वीकृत भी करा लिया।

कलकत्ता कांग्रेस मे असहयोग आन्दोलन का विरोध करते हुये पुज्य मालवीय जी ने कहा था :-

असहयोग शब्द से मै भयभीत नहीं हूं और न इसके सिद्धान्त का विरोधी हूं, नहीं मैं इसे कानून विरुद्ध या अवैध समझता हूं। पर मुख्य प्रश्न यह है कि क्या आपको विश्वास है

कि इससे हमारा उद्देश्य सिद्ध होगा और इसके अवलम्बन से टर्की और पंजाब के साथ किये गये अन्याय दूर हो जायेंगे। यदि यह मान लिया जाय कि इससे हमारा उद्देश्य सफल हो जायगा तो प्रश्न यह उठता है कि इसके लिये कितने समय और स्वार्थ त्याग की आवश्यकता है और लोग इसके लिये तैयार हैं या नहीं। पदवी त्याग करने के सम्बन्ध में भारतीय कौंसिल में कहा गया है कि बहुत कम सनदें वापस की गई हैं। मैं स्कूलों से लड़कों को उठाये जाने के पक्ष में नहीं हूँ। हमको अधिक स्कूलों और कालेजों की आवश्यकता है और मेरी समझ में स्कूलों से लड़कों को उठा लेने की नीति गलत है क्योंकि इससे सरकार पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ेगा। वकालत छोड़ने के सम्बन्ध में मेरी राय यह है कि पंचायतें स्थापित की जाय। सस्ते में न्याय का प्रबन्ध होना अत्यन्त लाभदायक है। जब इस तरह की पंचायती अदालतें कायम हो जाय उस समय वकीलों को वकालत छोड़ने के लिये कहना उचित होगा। कौंसिलों के बायकाट का प्रश्न इसके बाद उपस्थित होता है। महात्मा गांधी की धारणा है कि यदि लोग कौंसिलों में जाना अस्वीकार करें तो सरकार यह समझेगी कि लोग असन्तुष्ट हैं। पर इस सम्बन्ध में हमें तीन बातों पर विचार कर लेना चाहिये। प्रथमतः यह कि लोग इस प्रस्ताव के अनुसार काम करेंगे या नहीं। यदि हममें से कुछ लोग कौंसिलों में जाने से अस्वीकार करें तो कुछ दूसरे लोग, नरम दल वाले और दूसरे लोग तो कौंसिलों में जायेंगे ही। इसलिये इस शस्त्र का उपयोग प्रस्तावक के कथनानुसार सरकार को पंगु बनाने में समर्थ नहीं होगा बल्कि सरकार को इससे कुछ अवांछितों के न आने से आनन्द ही होगा और परिणाम स्वरूप कुछ अवांछित कानून पास किये जायेंगे। मेरी समझ में कौंसिलों के बायकाट से कोई फल लाभ न होगा।

मालवीय जी का प्रस्ताव था कि भारत सरकार ने हर प्रकार से यह सिद्ध कर दिया है कि वह शासन करने के सर्वथा अयोग्य है। हम लोगों को एक दम और तुरन्त यह घोषणा करनी चाहिये कि हम पूर्ण स्वराज्य लेकर ही शान्त होंगे। पंजाब खिलाफत सुधार इत्यादि का नाम लेकर हमको अपने उद्देश्य को परिमित नहीं करना चाहिये और पूर्ण स्वराज्य के महायज्ञ के ही लिये महत् आयोजन करना चाहिये। ब्रिटिश सरकार और मन्त्रि मंडल को हमें अन्तिम सूचना दे देनी चाहिये और अपने कार्य में लग जाना चाहिये। सबसे पहले हम लोग भारतीय नवयुवकों की सेना अर्थात् सिटीजन्स आर्मी का संगठन करें। यह सेना हमारी पुलिस का काम करेगी। प्रत्येक ग्राम में हमारी पुलिस होनी चाहिये। इसके साथ ही हमें ग्राम ग्राम में पंचायतें स्थापित करना चाहिये जिसमें हमारे मामले

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

के झगड़े तय हों और सस्ता न्याय मिले । इन दो बातों के संगठन में पूर्ण सफलता के लिये नेतागण प्रत्येक तहसीलों में घूमें और अपने भाइयों को समझायें कि उन्हें क्या करना है ! इसके साथ ही साथ राष्ट्रीय स्कूलों और उद्योग धन्धों का प्रबन्ध किया जाय । नेताओं का दल सब काम काज छोड़कर स्वराज्य यज्ञ की वेदी पर बैठ जाय और ग्रामों में घूम घूम कर अपना कार्यक्रम प्रारम्भ कर दें ।

मालवीय का कहना यह भी था कि भारतीयों का एक दल विदेशों में जाय और वहां की जनता की सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयत्न करें ।

मालवीय जी का समर्थन कर रहे थे मिस्टर जिन्ना । मिस्टर जिन्ना नहीं चाहते थे कि कांग्रेस खिलाफत के प्रश्न को उसमें हम लोगों को दस्तन्दाजी नहीं करनी चाहिये । देश बन्धु दास, बाबू विपिनचन्द्र पाल, श्री व्योम केश चक्रवर्ती, सर आशुतोष चौधरी, श्री केलकर, जयकर, डाक्टर मुंजे श्री जोसफ बेपटिस्टा, श्री विजय राघवा चारियर, डाक्टर ऐनी बेसेन्ट, श्री सत्यमूर्ति, अधिवेशन के सभापति लाला लाजपतराय स्वयं, इत्यादि प्रायः सभी तत्कालीन नेता गांधी जी के असहयोग प्रस्ताव के सख्त विरोधी थे । पर गांधी जी का प्रस्ताव पास हो गया कोरे संख्या बल से । महात्मा जी के व्यक्तित्व की यह भारी विजय थी ।

मैं ऊपर बतला चुका हूं कि १९१८ की दिल्ली कांग्रेस का सभापतित्व मालवीय ने किया था । उस समय कांग्रेस की बागडोर उन्हीं के हाथों में थी । वह देश के लाड़ले हो रहे थे । १९१९ की अमृतसर कांग्रेस के सभापतित्व का सेहरा उनकी इच्छानुसार उनके मित्र माननीय पंडित मोती लाल जी नेहरू के सर बांधा गया । इसी कांग्रेस में कांग्रेस विधान में संशोधन कर उसे व्यापक बनाने के लिये एक उपसमिति नियुक्त की गयी जिसके सदस्य महात्मा गांधी और लोकमान्य तिलक के दक्षिण बाहु श्री नरसिंह चिन्तामणि केलकर जी चुने गये थे । केलकर जी ने सारा कार्य गांधी जी पर छोड़ दिया और इस प्रकार कांग्रेस का नया विधान वास्तव में महात्मा गांधी जी का बनाया विधान था । माडरेट दलवाले कांग्रेस से पहले ही अलग हो चुके थे । नागपुर कांग्रेस अधिवेशन में लाला जी, देशबन्धु दास, श्री केलकर, जयकर, मुंजे इत्यादि नेताओं ने भी अपने विरोध का झंडा झुका दिया और इस तरह सम्पूर्ण कांग्रेस गांधीवादी हो गयी और भारतीय राजनीति में गांधीयुग का प्रारम्भ हुआ । सारे देश में असहयोग की आंधी बह गयी । उस आंधी के सामने बड़े बड़े स्तम्भ ढह गये ।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

जिन मालवीय जी ने १६२०.२१ के महात्मा जी के असहयोग आन्दोलन का इतना विरोध किया वही दस वर्ष बाद सन् ३०.३१ के उनके आन्दोलन के पूर्ण समर्थक कैसे बन गये, यहां तक कि जेल भी हो आये, यह सब कैसे हुआ इसके उत्तर मे मै एक कहानी कही जाती है जिसे अब भी थोड़े ही लोग जानते है और जिसे यहां पर सुनाना अनुचित न होगा ।

अफगानिस्तान मे अमीर अमानुल्ला का राज्य था और अंग्रेजों से उनकी अनबन चल रही थी । कहा जाता है कि मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अली इत्यादि कट्टर पंथी मुसलमानों ने, जो पान इस्लामिज्म का सपना देख रहे थे, अमीर को भारत पर हमला करने के लिये आमंत्रित किया और अमीर को इस बात का विश्वास दिलाया कि उनके हमला करने पर सारा भारत उनका साथ देगा और उनका स्वागत करेगा । मुस्लिम नेता और विशेषकर अली बन्धुओं के व्याख्यानों ने एक नई ही समस्या खड़ी कर दी । मद्रास की एक सभा मे बोलते हुये मौलाना मुहम्मद अली ने कहा कि अगर अमीर, जर्मन, बोलशेविक, तुर्क या और ही कोई बाहरी शक्ति भारत पर आक्रमण कर देशवासियों को गुलाम बनाने के लिये आयेगी तो हम केवल विरोध मे सहायता ही न देंगे वरन् हम लोग विरोधी दल के अगुवा होंगे किन्तु यदि अमीर काबुल भारतवासियों को गुलाम न बनावें और भारतवासियों पर जिन्होंने उनको कभी कोई क्षति नहीं पहुंचाई शासन करने की इच्छा से नहीं बल्कि उन लोगों से लड़ने के लिये आवें जिनकी दृष्टि सदा अफगानिस्तान पर रही है, जो सदा उनकी रियाया को अपने कब्जे मे रखना चाहते है जो खिलाफत को नष्ट करना चाहते है तब यही नहीं कि हम लोग अमीर के विरोधियों की सहायता नहीं करेंगे बल्कि हमारा और अपने को मुसलमान कहलाने वालों का यह कर्तव्य होगा कि हम लोग कमर कस कर इस्लाम की लड़ाई लड़े ।

इस भाषण ने देश के राजनैतिक क्षेत्र मे बम के गोले का काम किया । घनघोर बहस छिड़ गयी । इसी बीच मे स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपनी पत्रिका श्रद्धा मे एक लेख लिखा कि अफगान सरकार का एक राजदूत, यह जानने के लिये भारत आया था कि यदि अमीर भारत पर हमला करें तो यहां के हिन्दुओं का रुख क्या होगा? वह राजदूत पहले मालवीय जी से मिला । मालवीय ने उसे महात्मा जी के पास भेज दिया । महात्मा जी ने उसे मौलाना मुहम्मद अली के पास भेजा और मौलाना मुहम्मद अली ने इस

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

प्रश्न के उत्तर मे अमीर के नाम फारसी भाषा मे एक पत्र लिखकर उस दूत को दिया। उक्त पत्र मे मौलाना मुहम्मद अली ने लिखा था कि यदि अमीर भारत पर हमला करे, अंग्रेजों से बदला लेने के लिये और इस्लाम की रक्षा के लिये तो भारतीय उनकी सहायता करेंगे। इस बात को सर तेज बहादुर सप्रू ने जो उस समय सरकार के कानूनी सदस्य थे, मालवीय जी से बतलाई और इस प्रकार इस सारे रहस्य का भंडाफोड हो गया।

पूज्य मालवीय जी ने एसोशियेटेड प्रेस के प्रतिनिधि को इस सम्बन्ध मे वक्तव्य देते हुये एक अफगानी के अपने पास आने की बात स्वीकार की थी पर इस बात से उन्होने इंकार किया था कि उन्होने उस तथा कथित दूत को महात्मा जी के पास भेजा या सर सप्रू से इस सम्बन्ध मे उनकी कोई बातें हुईं। उन्होने कहा कि मैने तो तथा कथित दूत को सरकारी गुप्तचर विभाग का आदमी समझा और उसे यह सलाह देकर वापस कर दिया कि अमीर का भारत पर हमला करना बेमानी होगा क्योंकि अंग्रेजों के पास लड़ाई के साधन और शक्ति अमीर की अपेक्षा बहुत अधिक है। कहा जाता है कि असहयोग आन्दोलन का विरोध करने के मालवीय जी के कारणों मे यह भी एक महत्वपूर्ण कारण था।

यह बात उसी समय की है। लार्ड रीडिंग भारत के वाइसराय होकर आये ही आये थे। मालवीय जी स्वास्थ्य सुधार के लिये शिमले गये हुये थे। लार्ड रीडिंग से वह मिले। जिस दिन प्रथम प्रथम मालवीय जी वाइसराय से मिलने जा रहे थे सर तेज ने अपने एक मित्र से कहा था

इस मेंच मे जो कुछ हुआ उसके फलस्वरूप मालवीय जी और लार्ड रीडिंग की मुलाकातों का तांता सा बंध गया। कहा जाता है लार्ड रीडिंग स्वयं भी कभी कभी अपनी प्रात:कालीन हुवाखोरी से लौटते समय "शान्ति कुटी", जहाँ मालवीय जी निवास करते थे, मे रुक कर उनसे सलाम दुआ कर लेते थे। इन मुलाकातों का नतीजा हुआ कि गांधी जी एक दिन शिमले पहुँचे। पत्रों मे छपा तो यह कि गांधी जी मालवीय जी के बुलावे पर उनसे ही मिलने के लिये शिमले जा रहे है पर मिले वह वहाँ वाइसराय लार्ड रीडिंग से भी। एक नहीं दो तीन बार। पंजाब के

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

लाला लाजपत राय जी भी उसी समय वहाँ पहुँचे । उनसे पूछा गया कि क्या आप भी वाइसराय से मिलने आये हैं तो उन्होंने कहा, "नहीं भाई । मेरे तो दोनों वाइसराय यहाँ विराजमान हैं,उन्हीं का हुक्म मुझे बजाना है और मैं उन्हीं से मिलने आया हूँ ।" पर मिले वह भी अंग्रेज वाइसराय से । हो सकता है कि अंग्रेज वाइसराय से मिलने का कारण "लाला जी के वाइसरायों" की इच्छा ही रही हो । जो भी हो,इस समय का इतिहास ठीक ठीक कभी यदि लिखा गया तो दुनिया देखेगी कि उपर्युक्त मंच या मचान में जीत सोलहों आना मालवीय जी की निश्चित थी और यदि उसका फल "कुछ भाइयों की माफी" के रूप में प्रकट हुआ तो यह दोष मालवीय जी का नहीं था । माफी सम्बन्धी प्रश्न को लेकर जब झगड़ा बहुत बढ़ा तो कुछ भाइयों ने कहा कि माफी सरकार से नहीं मालवीय जी से माँगी गई है । किन्तु स्वर्गीय लाला जी ने अपने पत्र में साफ साफ लिखा कि माफी और किसी से नहीं बल्कि सरकार से माँगी गयी है और यह बुरा हुआ । पं० मोतीलाल जी नेहरू तो बेतरह नाराज हो गये थे । उन्होंने इस सम्बन्ध में एक कड़ा पत्र महात्मा जी को लिखा । कहा जाता है कि उस समय अपने पत्र   में उन्होंने एक प्रधान असहयोगी नेता के पत्र का जो उत्तर दिया था वह नेहरू जी के पत्र का ही उत्तर था ।

यह सही है कि मालवीय जी की चेतावनी के विरुद्ध अपने मन से महात्मा जी ने बातचीत के दौरान में कुछ भाइयों द्वारा खेद प्रकाश की बात कह दी थी वाइसराय से बिना कुछ और बातें तय किये हुये ही मालवीय जी कुछ बन्धुओं द्वारा इस प्रकार "मुक्त माफी" के विपक्ष में थे पर गाँधी जी पर कोई हमला करे और मालवीय जी चुप रहें यह असम्भव था । वह बीच में पड़े । उन्होंने एक लम्बा चौड़ा पत्र महात्मा जी के लिखा और जिन "एक आदरणीय मित्र" के पत्र का उत्तर महात्मा जी ने अपने   में उस समय दिया था वह आदरणीय मित्र और कोई नहीं मालवीय जी ही थे । पत्र का फल यह हुआ कि गाँधी जी ने वाइस राय को पत्र लिखा कि यदि उन्हें आपत्ति न हो और वे यह न समझें कि गोपनीय बातें प्रकट की गयीं तो महात्मा जी भेंट की सारी बातों को प्रकाशित करदें। मालवीय जी भी वाइसराय से मिले और इन सब बातों का नतीजा सरकारी विज्ञप्ति हुई जिसके प्रकाशन से महात्मा जी की स्थिति बहुत कुछ साफ हो गई ।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

इस घटना को विस्तार के साथ हमने इसलिये आपको सुनाया है कि इससे दो बातें प्रत्यक्ष होती है। पहली बात यह कि मालवीय जी किसी के साथ भी, चाहे उससे उनका कितना ही मतभेद क्यों न हो, कोरम कोर देश भक्त या राजनीतिज्ञ ही नहीं बल्कि जबरदस्त कूटनीतिज्ञ भी थे।

मतभेद रखने वालों तथा उसकी ईमानदारी के प्रति भी वह कितने उदार रहा करते थे इस सम्बन्ध मे दो एक घटनायें और सुना दूं। अब पहली घटना उपर्युक्त शिमला सम्मेलन के समय की ही है। शिमले मे एक सार्वजनिक सभा हुई ; गांधी जी लाला जी के व्याख्यान हुये। मालवीय जी भी उपस्थित थे। लाला जी ने अपने व्याख्यान मे कहा, " मुझे यह कहना पड़ता है कि देश के लोगों की मनोवृत्ति ऐसी है और उनके भाव इतने उग्र है कि यदि असम्भव सम्भव हो जाय और समझौते मे गांधी जी स्वराज्य का सिद्धान्त त्याग दे तो देश उनका साथ न देगा। " मालवीय जी से बरदाश्त नहीं हुआ। गांधी जी के सम्बन्ध मे असम्भव सम्भव हो कैसे सकता है ; उन्होंने तुरन्त ही लाला जी को टोका और बोले, " गांधी जी का इस प्रकार उल्लेख कर लाला जी ने पाप किया है। " पाप शब्द पर ध्यान दीजियेगा। इस घटना का जिक्र स्वयं लाला जी ने अपने पत्र मे उस समय किया था। इस सम्बन्ध मे यह भी स्मरण रखने योग्य बात है कि मालवीय जी उस समय गांधी जी के असहयोग आन्दोलन के पूर्ण विरोधी थे।

एक ऐसी ही दूसरी घटना १९२६ की है। कांग्रेस से उनका विकट चुनाव युद्ध चल रहा था। कांग्रेस की ओर से स्वराज्य पार्टी चुनाव लड़ रही थी और उसके नेता मालवीय जी पर तीव्र से तीव्र आक्रमण कर रहे थे। मालवीय जी मेरठ गये हुये थे। एक सार्वजनिक सभा मे उनका स्वागत किया गया उन्हें मानपत्र समर्पित किये गये। एक कवि महोदय अपनी स्वागत कविता मे स्वराज्य पार्टी के नेता पं० मोतीलाल जी नेहरू पर कुछ अनुचित आक्रमण कर बैठे। मालवीय जी ने कविता पाठ बीच ही मे रुकवा दिया। बोले, " मोतीलाल जी अवस्था मे मुझसे ६ महीने बड़े है। मेरा उनका आज मतभेद है तो इसके अर्थ यह कदापि नहीं हुये कि वह मेरे बड़े भाई नहीं रहे। वह भी उतने ही देश भक्त है जितना कोई दूसरा महान से महान भारतीय। मै उनकी इस प्रकार निन्दा नहीं सुन सकता। आपको भी न सुनना चाहिये, न करना चाहिये। "

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

मिलाइये इन बातों को आज के नेताओं बातों से । आज तो सरकारी पदों के लिये हमारे नेतागण सब कुछ त्याग करने को तैयार है, सरकारी पद उनके लिये
जीवन के प्रथम और अन्तिम आदर्श बन रहे है । मालवीय जी ने कभी उस ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा । सन् २१ की घटनायें आपको सुना रहा था इसलिये इसे भी सुन लीजिये । मै कह चुका हूँ लार्ड रीडिंग मालवीय जी से अत्यधिक प्रभावित थे । तत्कालीन होम मेम्बर सर विलियम विन्सेन्ट का कार्य काल समाप्त होने जा रहा था । लार्ड रीडिंग की जोरदार प्रार्थना मालवीय जी से थी कि वह होम मेम्बर का पद स्वीकार करें । पत्रों मे भी यह खबर छप गई । और तो और सहयोगियों ने भी उन पर जोर डालना प्रारम्भ किया कि वह उक्त पद को स्वीकार कर लें । उस समय के प्रमुख सहयोगी पत्र "डिमाक्रेट" ने एक जोरदार सम्पादकीय टिप्पणी इस सम्बन्ध मे लिख डाली । उसने लिखा, "मालवीय जी के समान श्रेष्ठ और सच्चे देश भक्त के पद स्वीकार कर लेने से भारत सरकार के आदर मे जो कमी आ गई है उसकी पूर्ति हो जायगी। इनके शासन काल मे दमन नीति नहीं चल सकेगी । यदि नौकरशाही अन्याय या दमन पर आमादा होगी तो मालवीय जी तुरन्त स्तीफा दे देंगे और राष्ट्रीय आन्दोलन के अगुआ हो जायेंगे ।" इत्यादि पर मालवीय जी का उत्तर एक था । "सरकारी नौकरी करना मेरा काम नहीं । विदेशी सरकार की तो बात ही क्या यदि अपनी स्वराज्य सरकार हो जाय तो भी नहीं । मै तो जनता का सेवक हूँ, उसकी सेवा मे जितनी सेवक रूप मे कर सकता हूँ उतना उसका शासक बनकर नहीं कर सकता । राजर्षि टंडन जी ने उस दिन आपको इसी सम्बन्ध मे स्वयं उन्हें दिये गये उस उत्तर को सुनाया ही था
काश यही भाव हमारे आज के नेताओं मे भी होते तो शायद देश की यह दशा न होती जो आज हम देख रहे है ।

राजनैतिक जीवन मे मालवीय जी ने एक अत्यन्त ऊँचा नैतिक आदर्श या परिमाण कायम किया था और उसे उन्होंने अपने जीवन मे चरितार्थ कर यह भी प्रत्यक्ष कर दिया कि वह नितान्त कल्पना और स्वप्न की बात या असाध्य और अकार्यशील नहीं है । उन आदर्शों को ग्रहणकर आज भी देश के राजनैतिक जीवन को पवित्र और स्वास्थ्यप्रद बनाया जा सकता है और उन्हें छोड़ देने से उन्नति नहीं हमारी अवनति हो चुकी है और होगी ।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत
National Archives of India

इधर यह चल रही थी, उधर एक वर्ष मे महात्मा व्दारा देश को किये गये वायदे माफी की हाय हाय, एक वर्ष के अन्दर स्वराज्य की अवधि बीत रही थी। मालवीय जी समझ रहे थे कि महात्मा जी का वायदा तो पूरा होने से रहा और असफलता की दशा मे देश मे पस्त हिम्मती और मुर्दनी छा जाने का भय है।

उन्होंने देश के असहयोगी नेताओं की एक कांफ्रेन्स बुलाई जिसे इतिहास मे मालवीया कांफ्रेन्स के नाम से पुकारा जाता है। इस कांफ्रेन्स की ओर से एक प्रतिनिधि मंडल लेकर वह वाइसराय से मिले और एक सम्मान जनक समझौता कराने का उन्होंने पूर्ण प्रयत्न किया। कहा जाता है कि मालवीय जी को सफलता मिल भी गयी थी। वाइसराय सिवा मौलाना मुहम्मद अली और शौकतअली के बाकी सब कांग्रेसी कैदियों को छोड़ने के लिये तैयार थे। यह निश्चय हुआ था कि इसके बाद राजनैतिक मांगों को हल करने के लिये एक कांफ्रेन्स बुलाई जाय। प्रिंस आफ वेल्स व्दारा प्रान्तों मे व्दिहस्ता शासन के अन्त तथा केन्द्र मे भी उसके प्रारम्भ की घोषणा भी कराई जाने की खबर थी। बदले मे महात्मा जी को प्रिंस आफ वेल्स के स्वागत का बायकाट रोकना था और अपने आन्दोलन को कांफ्रेन्स हो जाने तक के लिये स्थगित करना था। देशबन्धु दास इस समझौते के प्रबल समर्थक थे और महात्मा के इसे स्वीकार न करने के कारण बाद मे उन्होंने गांधी जी का प्रबल विरोध भी किया था। अपनी ओर से कुछ न कहकर मे आपके सामने सुभाष बाबू ने इस घटना पर जो कुछ अपनी मशहूर पुस्तक   मे लिखा है उसे सुनाये देता हूं :

सुभाष बाबू फिर लिखते है :

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

सर तेज बहादुर सप्रू के मुख से इन पंक्तियों के लेखक ने सुना है कि लार्ड रीडिंग की, जो अपने समय के प्रमुख ब्रिटिश राजनीतिज्ञ और कूटनीति विशारद माने जाते थे और जिनके नीचे ब्रिटिश प्रधान मन्त्री लार्ड ऐस्क्वथ तथा वर्षों भी काम करने को तैयार थे, उनकी राय थी कि,

बात काफी पुरानी हो गयी है। सर तेज के शब्द यही रहे हों या नहीं, किन्तु उनके भाव यही थे।

इसी प्रकार गोलमेज कान्फ्रेन्स के अवसर पर इंगलैंड में प्रधान सचिव रैमजे मैकडानल्ड ने स्वयं मालवीय से कहा था, "हम अंग्रेज मिस्टर गांधी को उतना खतरनाक नहीं समझते जितना आपको।"

सन् १९१६ में पहले पहल जब तत्कालीन वाइसराय लार्ड हार्डिंग से मिले थे तो उन्होंने भी मालवीय जी से साफ साफ कहा था, "मेरे पास जो सरकारी रिपोर्टें पहुंची हैं उनके अनुसार तो आप हम अंग्रेजों को तुच्छ और घृणा की दृष्टि से देखते हैं और सरकार के गुप्त दुश्मन हैं।"

मालवीय जी ने उत्तर दिया कि आप किसी विश्वासपात्र व्यक्ति को नियुक्त कर मेरे समस्त लेखों और भाषणों की जांच करायें और यदि उनमें कोई अंश ऐसा हो जिसमें अंग्रेजों के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न होता हो तो मैं माफी मांगने को तैयार हूं।" लार्ड हार्डिंग मान गये पर सरकारी रिपोर्टों में तो मालवीय जी को नाना

तथा मेरे पिता जी को नाना फड़नवीस के वंशज के नाम से स्मरण किया जाता था ।

एक बार स्वर्गीय महात्मा गोखले के उत्तराधिकारी महामान्य श्री श्रीनिवास जी शास्त्री ने लिखा था :

" परब्रह्म परमात्मा की यह असीम कृपा है कि महात्मा गांधी और पंडित मालवीय जी जैसी महान् शक्तियाँ परस्पर प्रेम में बंधी हुई इस संसार में वास कर रही हैं । " बेकन ने एक जगह कहा है :

और महामान्य शास्त्री जी का भाव भी यही है कि यह एक असाधारण बात है कि महात्मा जी और मालवीय जी में इतना प्रेम सम्बन्ध बराबर होते हुये भी बना है । लेकिन मुझे तो इसी बात में दोनों की ही असाधारणता और महानता के दर्शन होते हैं । यह बिलकुल सही बात है कि कितने ही प्रश्नों पर महान् मतभेद होते हुये भी यह दोनों शक्तियाँ एक दूसरे की विरोधी नहीं बल्कि प्रतिपूरक थीं । सच्ची बात यह है कि महात्मा जी प्रायः अपने आत्मा की पुकार पर कदम उठा बैठते थे । विषम परिस्थितियों में फंस जाने पर मालवीय जी और केवल मालवीय जी पर ही उनकी दृष्टि जाती थी और मालवीय जी भी सब कुछ छोड़कर उनकी सहायता को दौड़ पड़ते थे । उन्होंने कभी गांधी जी को छोड़ा नहीं ।

सन् १९३१ में करांची कांग्रेस के अवसर पर मालवीय जी कांग्रेस की कार्य समिति में रक्खे जांय या नहीं यह प्रश्न उठा । गांधी जी कांग्रेस कार्यसमिति की सूची बनायें और उसमें मालवीय जी का नाम न हो यह आश्चर्यजनक बात थी । कोई महात्मा जी से पूछ ही तो बैठा । उत्तर में महात्मा जी ने "नवजीवन" में लिखा था :

"एक पाठक पूछते हैं, आपने करांची में विषय समिति को दक्षिण भारत के सदस्यों को कार्यसमिति में न रखने का कारण तो समझाया पर यह नहीं बतलाया कि मालवीय जी को क्यों अलग रक्खा गया ?"

बात इतनी स्पष्ट थी कि किसी ने पूछा ही नहीं । मालवीय जी का अपमान करने का तो इसमें कोई सवाल हो नहीं सकता । वह अपमान से परे हैं । कोई भी संस्था उन्हें अपना सदस्य बनाकर उनकी स्थिति या उनके महत्व को बढ़ा नहीं सकती । हां, उनकी सदस्यता से संस्था की प्रतिष्ठा बढ़ सकती है । कार्यसमिति ने इरादतन उन्हें अलग रक्खा जिससे समय पड़ने पर उनकी स्वतंत्रता और काम करने की आजादी कायम या सुरक्षित रहे । सदस्य न रहते हुये भी जब से नेता लोग छूटे हैं वह बराबर कार्य समिति की बैठकों में

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

उपस्थित रहे है। चूंकि कार्य समिति मे उनका काम मुल्यवान रहा है सदस्यों ने सोचा कि उन्हें समिति के अनुशासन मे लेना कहीं उनके लिये कष्टप्रद न सिद्ध हो। डाक्टर अंसारी तो मालवीय जी को समिति मे रखने के लिये इतने उत्सुक थे कि उनके लिये स्वयं हट जाना उन्हें पसन्द था पर जिस विचार का मै ऊपर जिक्र कर आया हूं,उसे जमना लाल जी ने ऐसे प्रभावशाली शब्दों मे रक्खा कि डाक्टर अंसारी को भी राजी होना पड़ा कि मालवीय जी अलग रक्खे जांय। इस व्यवस्था से समिति अपनी बैठकों मे मालवीय जी की सलाह से लाभ भी उठा सकती है और साथ ही उनकी कार्य स्वतंत्रता मे उन्हें किसी प्रकार के बाधा भी नहीं पड़ती। गोलमेज परिषद् मे उन्हें अलग से निमंत्रित करके सरकार ने भी समाज मे उनकी अद्वितीय स्थिति को स्वीकार किया है।

वास्तविक बात यही थी कि कांग्रेस के अनुशासन से बन्धन रहकर,स्वतंत्र रहते हुये वह देश,कांग्रेस और महात्मा जी की अधिक सहायता कर सकते थे। यूं तो संकट पड़ने पर वह पूर्ण कांग्रेसी बन ही जाते थे। सन् ३३.३४ के गैर कानूनी कांग्रेस अधिवेशनों का सभापतित्व उनके सिवा कौन कर सकता था ? मुझे स्मरण है, तत्कालीन कांग्रेस सभापति श्री अणे ने मालवीय जी व्दारा कांग्रेस के गैर कानूनी कलकत्ता और दिल्ली अधिवेशनों का सभापतित्व स्वीकार करने पर कहा था : " आज भारत स्वतंत्रता के यज्ञ मे अपनी सबसे महान् और सबसे अधिक मुल्यवान आहुति भेंट कर रहा है। इससे अधिक गरीब भारत के पास है ही क्या ?" मालवीय जी को गिरफ्तार करते हुये सरकार भी कांपती थी। गांधी जी तथा अन्य कांग्रेस नेताओं को गिरफ्तार करना उसके लिये इतना कठिन नहीं था। सन् ३० से सन् ३४ तक मालवीय जी ने अपने को महात्मा जी के व्यक्तित्व मे मिला सा लिया था। गोलमेज कांफ्रेन्स मे वह गांधी जी के साथ ही गये थे। लाला लाजपत राय के शब्दों मे मालवीय जी हिन्दू भारत के अनभिषक्त राजा थे। उनकी इच्छा के विरुद्ध कांग्रेस या गांधी जी मुसलमानों को कोरी चैक दे सकते थे पर उसे भुनवा नहीं सकते थे। पर गोलमेज कांफ्रेन्स मे वह जैसे कुछ बोले ही नहीं। बोले भी तो बस महात्मा जी के समर्थन मे। लोगों ने बहुत उभाड़ा, बड़े प्रयत्न किये गये कि वह महात्मा जी का साथ रोके क्यों कि वही एक व्यक्ति थे जो महात्मा जी के मुकाबिले मे खड़े हो सकते थे पर उन्होंने तो जैसे सब मामलों मे महात्मा जी के जरिये ही काम करने की कसम ही खाली थी।

उस अवसर पर सरदार पटेल के बड़े भाई अध्यक्ष पटेल,

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

नेता जी सुभाष चन्द्र बोस, स्वर्गीया सरोजनी नायडू ने कहा था :
" मालवीय जी हिन्दू सभ्यता की जीती जागती प्रतिमूर्ति है ।
वह आज अपने हृदय के विश्वासों को प्रकट करने के लिये यहाँ आये हैं ।
मैं कोरे ब्राह्मण को पसन्द नहीं करती । पर मालवीय जी यहाँ पर
भिखमंगे का भिक्षापात्र लेकर नहीं आये हैं बल्कि वे यहाँ आये हैं एक
परम्परा गत ज्योतिषी की तरह यह बताने के लिये कि भारतीय
स्वतंत्रता का नक्षत्र अब उदय होने ही वाला है ।"

अपने इस प्रसिद्ध भाषण के अन्त मे जब यह कहकर मालवीय जी
बैठे थे : " यद्यपि मैं मनुष्य जाति को प्रेम की दृष्टि से देखता हूँ
तथापि यह कहने मे भी मैं संकोच नहीं करता कि यदि ब्रिटिश सरकार
भारत को उसके अधिकार नहीं प्रदान कर देती तो भारत मे भयंकर
राज विद्रोह होगा । हमारी असफलता का फल प्रत्येक ब्रिटिश वस्तुओं
से घृणा और असन्तोष के रूप मे फूट पड़ेगा । इंगलैंड के सम्मुख एक और
केवल एक प्रश्न है । इंगलैंड बतलाये कि वह शान्ति चाहता है या युद्ध"

तो हाल बहुत देर तक अपार करतल ध्वनि और क्रान्ति
चिरंजीवी हो के नारे से गूंजता रह गया । इंगलैंड मे उनके प्रचार कार्य
को देखकर पंजाब हत्याकाँड के प्रसिद्धि प्राप्त सर माइकेल ओडायर ने
मार्निंग पोस्ट मे एक लेख लिखकर मालवीय जी को बहुत गालियाँ सुनाई
थीं । उन्होंने लिखा था , मालवीय जी बड़े खतरनाक व्यक्ति हैं ।
भारत के क्रान्तिकारी दल को अपनी वक्तृताओं द्वारा उन्होंने ही
भड़काया है । वे हृदय से क्रान्तिकारियों के साथ हैं । हमारे घर मे
आकर हमें ही गालियाँ देने की धृष्टता करना मालवीय जी का ही हिस्सा
है । इत्यादि । अनुदार पंथी पत्र खुले आम लिखने लगे कि महात्मा जी
और मालवीय जी को नजरबन्द कर किसी दूर टापू मे भेज दिया जाय ।
नजरबन्द कर दूर टापू मे तो यह लोग नहीं भेजे गये पर भारत मे आते
ही करबन्दी आन्दोलन का नेतृत्व दोनों को करना पड़ा और जेल भी
जाना पड़ा ।

देश की राजनीति मे महात्मा जी के आते ही मानो उन्होंने
अपने व्यक्तित्व को महात्मा जी के प्रतिपूरक, रक्षक, सुधारक और सहायक
के रूप मे परिणत कर लिया था । वह इतने प्रचंड देशभक्त थे कि
महात्मा जी का विरोध कर उनकी शक्ति को क्षीण करना देशद्रोह के
समान पाप समझते थे । गाँधी जी देश की शक्ति की प्रतिमूर्ति हैं ऐसा
वह मानते थे । गाँधी जी को साधारण जुकाम भी हो तो वह उद्विग्न
हो जाते थे । निःसन्देह गाँधी जी ने भी सदैव ही बड़े भाई कहकर

उन्हें प्रकाश और माना। सन् १९२७ में पूज्य मालवीय जी को लिखा गया महात्मा जी का यह पत्र मालवीय जी के प्रति उनके असीम प्रेम का सुन्दर परिचय दे रहा है।

सन् १९३४ में साम्प्रदायिक निर्णय के प्रश्न पर इन दो महान आत्माओं का राजनैतिक गठबन्धन टूटा और देश के लिये यह बहुत बुरा हुआ। साम्प्रदायिक निर्णय के प्रश्न पर महात्मा जी की अनुमति से कांग्रेस ने "न स्वीकार न अस्वीकार" की नीति ग्रहण की। मालवीय जी के लिये यह असह्य हो गया। साम्प्रदायिकता पर सिद्धान्तों की बलि देने का फल वह जानते थे। वह कांग्रेस से अलग हो गये और उन्होंने "राष्ट्रीय दल" की स्थापना कर कांग्रेस के विरुद्ध चुनाव लड़ा। यह उनके जीवन की अन्तिम लड़ाई थी। अपने एक लेख का अन्त उस समय मैंने इस प्रकार किया था :

"आज सन् १९३४ में ७५ वर्ष की अवस्था में पूज्य मालवीय जी महात्मा गांधी तथा कांग्रेस की साम्प्रदायिक निर्णय सम्बन्धी नीति के विरोध में पुनः खड़े हुये हैं। फल क्या होगा, वह जीतेंगे या हारेंगे, इसकी उन्हें चिन्ता नहीं। वह तो कर्म करना जानते हैं। आज नहीं तो एक समय ऐसा आयेगा जब जैसे आज लोग लखनऊ पैक्ट का कांग्रेस द्वारा समर्थन होना एक महान् गलत काम समझते हैं उसी तरह कांग्रेस के वर्तमान रुख की भी निन्दा करेंगे। अभी तो मालवीय जी बागी हैं। कांग्रेस की रक्षा करो इत्यादि चुनाव के नारे लगाने से ही कांग्रेस वालों को मुक्ति नहीं। हमें तो वर्तमान दशा देखकर ऐसा लग रहा है कि मानो मालवीय जी की आत्मा महान् अंग्रेजी कवि   की इन पंक्तियों में बोल सी रही है :

और ऐसा ही हुआ भी। इसमें सन्देह नहीं कि साम्प्रदायिक निर्णय के कारण जिन प्रान्तों का सीधा और अधिक नुकसान हो रहा था जैसे बंगाल, पंजाब, और सिन्ध वहाँ पूज्य मालवीय जी के दल की भारी विजय हुई और कांग्रेस बुरी तरह हारी। बंगाल की आठ सीटों में दुई, सिन्ध की एक सीट और पंजाब की ५ सीटों में चार मालवीय जी के दल को प्राप्त हुईं। बंगाल में कांग्रेस को शायद कुल एक सीट ही मिल पाई थी। लोकनायक श्री सी०पी० मराठी से चुने गये पर मालवीय जी स्वयं चुनाव सूची से नाम कटवा दिये जाने के कारण नहीं चुने जा सके।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

बाद में चुनाव पिटीशन लड़कर इस प्रान्त से केवल मेरे पिता जी उनके दल की ओर से चुने जा सके थे । इस चुनाव के दौरे के समय ही उनका स्वास्थ्य खराब हुआ और ऐसा खराब हुआ कि फिर वह सुधर ही न सका । शरीर धोखा दे रहा था । यों उनका स्वर्गवास हुआ १९४६ में पर सन् ३६ के बाद से तो वह करीब करीब बिस्तर पर ही रहा करते थे ।

अपने जिन अत्यन्त प्रिय छोटे भाई गांधी जी का उन्होंने जीवन भर साथ दिया, जिस कांग्रेस को ५० वर्षों तक उन्होंने अपने रक्त से सींचा उसी को अपनी ७५ वर्ष की अवस्था में उन्हें छोड़ना पड़ा यह कोई साधारण बात न थी । सच्ची बात यह है कि मालवीय जी के लिये यह एक अत्यन्त असाधारण बात थी । लोकमान्य तिलक के आग्रह पर १९१६ में लखनऊ पैक्ट को जहरीला समझते और मानते हुये भी वह चुप रह गये थे । १९३४ में अपने अत्यन्त प्रिय छोटे भाई गांधी जी की बात मानकर भी वह कम से कम चुप तो हो ही सकते थे पर इस बार उन्होंने चुप रहना तो दूर कांग्रेस छोड़कर वृद्धावस्था में देश के कोने कोने में दौड़ना पसन्द किया तो निश्चय ही इसका कोई असाधारण कारण था । उसका कारण था और जबरदस्त कारण था । गांधी जी के उपवास के फल स्वरूप होने वाले पूना पैक्ट के अनुसार साम्प्रदायिक निर्णय में परिवर्तन होने के बाद सब की इच्छा थी कि हिन्दू मुसलमान भी आपस में मिलकर अपनी समस्या को हल कर डालें बिना बाहरी शक्ति के बीच में पड़े हुये । मालवीय जी और मौलाना शौकत अली में बातें हुईं, क्योंकि मिस्टर जिन्ना उस समय यहां नहीं थे, और इन दोनों के अथक प्रयत्नों से इसी प्रयाग राज में ३ नवम्बर, १९३२ को म्योहाल में ऐक्य सम्मेलन की बैठकें प्रारम्भ हुईं जिसमें ६३ हिन्दू, ११ सिख, २९ मुसलमान तथा ८ ईसाई नेता सम्मिलित हुये । देश के वयोवृद्ध नेता श्री सी० विजय राघवा चारियर सभापति थे । इस ऐक्य सम्मेलन को करीब करीब सफलता मिल चुकी थी । बंगाल और पंजाब जैसे कठिन प्रश्न को भी सुलझा लिया गया था । हिन्दुओं और सिक्खों ने इन दोनों प्रान्तों में संयुक्त निर्वाचन द्वारा चुने हुये मुसलमानों को ५१ प्रतिशत का स्थायी बहुमत देना स्वीकार कर लिया था । केन्द्रीय शासन में मुसलमानों को ३२ प्रतिशत देना स्वीकार हुआ तथा सिन्ध को बम्बई से अलग करके एक स्वतंत्र प्रान्त बना देने का निश्चय किया गया इस शर्त पर कि आर्थिक व्यवस्था के लिये सिन्ध केन्द्रीय सरकार पर निर्भर न होगा । केवल एक ही बात तय होने को

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

रह गई थी । वहाँ अंग्रेजों को अपनी संख्या के अनुपात से कहीं अधिक स्थान दिये गये थे । सम्मेलन ने तय किया था उनसे प्रार्थना की जाय कि वह अपने इन अतिरिक्त स्थानों को छोड़ दें और उसे हिन्दू और मुसलमान आपस में बराबर बराबर बांट लें ।

मालवीय जी मौलाना शौकत अली तथा अन्य प्रतिनिधियों के साथ कलकत्ते के रास्ते में ही थे कि तत्कालीन भारतमन्त्री सर सेमुअल होर ने घोषणा कर दी कि सरकार ने केन्द्र में मुसलमानों को ३३, १।३ प्रतिशत प्रतिनिधित्व देना तय किया है साथ ही सिन्ध को वह स्वतंत्र प्रान्त बना देगी और केन्द्र से उसे आर्थिक सहायता भी दी जायगी । इस वक्तव्य का प्रकाशित होना था कि मुसलमान प्रतिनिधि पलट गये और उन्होंने ऐक्य सम्मेलन में निश्चित हुये प्रस्तावों की ओर दृष्टिपात करना भी उचित नहीं समझा ।

इस अनुभव ने मालवीय जी को तिलमिला दिया । वह मुसलमान नेताओं के खेल को समझ गये । ऐक्य सम्मेलन होने के पहले खबर थी कि सरकार केन्द्र में मुसलमानों को केवल ३० प्रतिशत स्थान देगी । ऐक्य सम्मेलन ने उसे बढ़ाकर ३२ प्रतिशत कर दिया और उसका नतीजा हुआ कि सरकार ने बोली बढ़ाकर उसे ३३,१।३ प्रतिशत कर दिया । मालवीय जी ने महसूस किया कि मुसलमान अपने सहयोग को नीलाम कर रहे हैं । बोली बढ़वाने के लिये ही वह हिन्दुओं से समझौते की मीठी मीठी बातें करते हैं । नीलाम में बोली बोलना हमारे लिये घातक है और बोली बोलना आयन्दा से हमारी ओर से बन्द हो जाय । मुसलमान साथ आये तो बहुत अच्छा न आये तो भी क्या ? हम अकेले स्वतंत्रता का युद्ध लड़ लेंगे पर मुस्लिम सहयोग की नीलामी बोली बोलने के फेर में अब हम नहीं पड़ेंगे, इससे हिन्दुओं का नुकसान होता है और सरकार को मुस्लिम सहयोग का भाव बढ़ाने में सहायता मिलती है । मैं ऊपर ही कह चुका हूँ कि कांग्रेस ने "न स्वीकार न अस्वीकार" की नीति स्वीकार की थी डाक्टर अंसारी के कहने पर जो उन दिनों मिस्टर जिन्ना के हाथों में खेल रहे थे । डाक्टर अंसारी के भरोसे कांग्रेस वालों का यह विश्वास हो गया था कि "न स्वीकार न अस्वीकार" की नीति ग्रहण करते ही मिस्टर जिन्ना उनके साथ आ जायेंगे और "राजेन्द्र जिना पैक्ट" के लिये तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी जो बार बार मिस्टर जिना के पास दौड़ते थे उसका कारण यह विश्वास ही था ।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

राजेन्द्र बाबू समझौते के लिये कितने उत्सुक थे यह केवल इसी बात से प्रत्यक्ष हो जाता है कि उन्होंने राजेन्द्र जिना पैक्ट की इस जहरीली धारा को कांग्रेस की ओर से स्वीकार कर लिया था कि बंगाल और पंजाब मे स्थायी मुस्लिम बहुमत बनाये रखने के लिये यदि कभी आवश्यकता पड़े तो हिन्दू और मुसलमानों के मतदाता बनने के योग्यता अलग अलग निश्चित की जाय अर्थात् हिन्दू बी०ए० पास हो या २०रु० वार्षिक कर देकर तभी मतदाता बन सकता हो तो मुस्लिम बहु संख्या को स्थायी रखने के लिये मुसलमान के वास्ते मतदाता बनने के लिये इन्ट्रेंस पास करना या १० रु० वार्षिक कर देना ही पर्याप्त समझा जाय। पूज्य मालवीय जी ने इस पैक्ट पर हस्ताक्षर करने से इंकार कर ठीक ही किया था। उन्होंने कहा था : "मैं अपने जीवन के अन्तिम काल में सदा सर्वदा के लिये हिन्दुओं की राजनैतिक दासता के पट्टे पर हस्ताक्षर कर अपने को भावी पीढ़ी के सामने कलंकित नहीं करना चाहता। इस प्रस्ताव का महत्व समझने के लिये यह जानना जरूरी है कि पंजाब और बंगाल मे हिन्दू और मुसलमान जन संख्या मे तीन चार प्रतिशत का ही फर्क था और मिस्टर जिना को सन्देह था कि १० दस बीस वर्षों बाद यह तीन चार प्रतिशत की कमी दूर होकर उक्त प्रान्तों मे कहीं हिन्दू बहुमत मे न हो जाय।

गांधी जी तथा कांग्रेस नेताओं द्वारा देश को मिस्टर जिना के जाल मे फंसते देखकर ही मालवीय जी बेहद चिन्तित और दुःखी थे। उन्हें विश्वास हो गया था कि यदि रोकथाम न की गई तो हिन्दू मुस्लिम ऐक्य की मृग तृष्णा के फेर मे पड़कर कांग्रेस नेता न जाने क्या कुछ कर सकते है और उनके हाथों मे हिन्दुओं का भाग्य सुरक्षित नहीं है।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

साम्प्रदायिक निर्णय के विरोध मे अपने चुनाव सम्बन्धी भाषणों मे मालवीय जी ने बार बार चेतावनी दी थी कि साम्प्रदायिक निर्णय न स्वीकार न अस्वीकार वाली कांग्रेसी नीति का फल विभाजित भारत होगा पर कांग्रेस तो मि० जिना को खुश करने का निश्चय कर चुकी थी । चुनाव समाप्त होते ही कांग्रेसी पत्रों मे छपने लगा कि मि० जिना कांग्रेस मे सम्मिलित होने जा रहे है और असेम्बली मे वह विरोधी दल का नेतृत्व करेंगे इत्यादि । तत्कालीन कांग्रेस के अध्यक्ष डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी मिस्टर जिना से मिले भी । :राजेन्द्र जिना: समझौते की चर्चा चली और जोरों से चली । कांग्रेस वालों को पूरी आशा थी कि अब तो कायदे आजम जिना के मन की हम लोगों ने कर दी अब तो वह कांग्रेस के साथ समझौता कर ही लेंगे । इत्तफाक से उस समय मे अपने पूज्य पिता श्री कृष्णकान्त जी मालवीय के साथ दिल्ली मे ही था । उन्हीं दिनों इसी बीच मे कायदे आजम जिना साहब भी दिल्ली तशरीफ लाये थे । पिता जी की जिना साहब की अच्छी खासी जान पहचान थी । पिता जी एक दिन उनसे मिलने गये । मे भी उनके साथ था । बातचीत के दौरान मे पिता ने जिना साहब से कांग्रेसी पत्रों मे नित्य छपने वाली इस खबर की सत्यता जाननी चाही कि वह कांग्रेस मे शामिल होने जा रहे है । जिना साहब का वह तीखा जवाब आज भी मुझे याद है । उन्होने कहा था "क्या तुमने चुनाव के दौरान मे बिहार प्रान्त के एक कांग्रेसी नेता की उस स्पीच को पढ़ा है जिसमे उन्होने पंडित जी :मालवीय जी: को रावण का खानदानी बतलाया था ? उन्होने कहा, "भला तुम्ही बतलाओ जब पंडित जी को ५० साल की सेवाओं का यह पुरस्कार गांधी जी के भक्त कांग्रेस वाले उन्हें दे रहे है महज इसलिये कि उनका मत गांधी से नहीं मिलता तो यदि मे आज कांग्रेस मे शामिल हो जाऊं और कल गांधी से मेरा मतभेद हो जाय, जो कि निश्चित है, तो क्या यह उसी समय मुझे यजीद का खानदानी कह कर न पुकारने लगेंगे ? तुम हिन्दू हो, तुम यह सब बरदाश्त कर सकते हो । मै ऐसा नहीं कर सकता । इस जीवन मे अब गांधी और मै एक मंच पर एक साथ न खड़े हो नहीं सकते । हां तुमसे कोई बाते करने आवे तो उससे बात करने से इंकार करना तो अराजनैतिकता होगी । आने दो, पंडित जी के अपमान का बदला इन बुड्ढों से तुम लोग नहीं ले सकते । मै इन लोगों को तमीजदारी का अच्छा सबक सिखलाऊंगा ।"

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत
National Archives of India

राजेन्द्र जिना पैक्ट हुआ । कहा जाता है कि यह पैक्ट कायदे आजम जिना का लिखाया हुआ था और राजेन्द्र बाबू ने कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से उसे स्वीकार कर लिया था फिर भी "राजेन्द्र जिना पैक्ट" रद्दी की टोकरी में फेंक दिया गया । क्यों इस सम्बन्ध में राजेन्द्र बाबू ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में केवल इतना ही लिखा है :

कायदे आजम जिना और पूज्य पिता जी की मुलाकात का जिक्र हमने ऊपर किया है उससे मि० जिना के हुकात भावों की जो झांकी हमें देखने को मिलती है उसे और पं० जवाहर लाल जी नेहरू द्वारा "आत्म कथा" में वर्णित इस कथन को मिलाकर और सारी बातें आपकी समझ में आजायगी । नेहरू जी ने लिखा है :

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

पुज्य पंडित नेहरू का उपर्युक्त कथन बिलकुल सत्य है किन्तु हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के राजदूत की मनोवृत्ति एक दम ऐसे कैसे बदल गई, उसे ऐसा बनाने मे हमारा दोष भी था या नहीं, यह भी अगर कांग्रेस वाले कभी सोचते तो शायद मामला इतना न बिगड़ता जितना वह बिगड़ा ऐसा मेरा विश्वास है।

क्षमा कीजियेगा सत्य बात कहने के लिये पर सच्ची बात यह है कि गांधी जी मे जिस दुसरी की बात्मा को महाकवि अकबर ने अपनी सुक्ष्म तथा पैनी दृष्टि से सन् १९२१ मे देख लिया था वह कोरी कल्पना न थी। सत्याग्रह को केवल मै ही समझता हूँ मै ही सत्याग्रह आन्दोलन चला सकता हूँ दुसरा नहीं, अपने को गोलमेज कांफ्रेन्स मे कांग्रेस का एक मात्र प्रतिनिधि बुलाना गांधी सेवासंघ की स्थापना इत्यादि बातें महाकवि अकबर के कथन की साक्षी है। अपनी अन्तरात्मा की आवाज पर वह कब क्या कर बैठेंगे भगवान भी शायद नहीं जान पा सकता था। ऐसे व्यक्ति के साथ, विशेषकर ऐसी अवस्था मे जब कि मिस्टर जिना के शब्दों मे अशिक्षित हिन्दुओं का बहुमत ईश्वर के समान उन्हें पुजता था, कोई साधारण कार्य न था। नेता जी सुभाषचन्द्र बोस के साथ क्या हुआ ? वह तो मिस्टर जिना या मुस्लिम लीगर नहीं थे, पक्के कांग्रेसी थी, महात्मा जी के भक्त थे। उन्हें भी तो एक नहीं हजार बार यह कहना पड़ा कि,

गांधी जी का विरोध कर कोई कांग्रेस मेरह ही नहीं सकता था। इसीलिये स्वतंत्र विचार वाले तथा ईमानदार लोग कांग्रेस से दूर रहे या निकाल बाहर किये गये। आज जब कि कांग्रेस के हाथों देश के शासन की जिम्मेदारी आ गयी है देश के सामने यही सबसे बड़ी समस्या है। जाते जाते अंग्रेजों को २०० साल लग गये पर

कांग्रेसी शासन तो ५,६ वर्षों में ही बदनामी की सीमा पार कर गया। मिस्टर जिना स्वयं बड़े हुदार थे। गांधी जी की कमजोरी उन्हें मालूम थी इसीलिये वह प्राय: गांधी जी का व्यक्तिगत अपमान तक कर बैठते थे। मालवीय जी का अपमान तो उन्होंने कभी नहीं किया क्योंकि वह मिस्टर जिना से सहमत न होते हुये भी उन्हें मुसलमानों का नेता स्वीकार करते थे और मानते थे कि हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के लिये उनका सहयोग जरूरी है। १९२३ में असेम्बली में जो स्वतंत्र राष्ट्रीय दल बना था उसके नेता मिस्टर जिना थे और मालवीय जी उपनेता। सन् १९२६ में असेम्बली में दल बना उसके अध्यक्ष होते हुये भी मालवीय जी ने उस दल का नेता लाला जी को बनाया। स्वयं उपनेता ही रहे। मालवीय जी में यह महानता बहुत बड़ी थी। देशहित में उन्होंने "स्व" की परवाह कभी की ही नहीं। इसी कारण शायद उनकी और महात्मा जी की भी इतने दिनों और इतनी खुशी के साथ निभ गई। वह इस मानी में सच्चे ब्राह्मण थे। ब्राह्मण कभी स्वयं गद्दी पर नहीं बैठा। उसने शासन सदा क्षत्रियों के हाथ में सौंपा और स्वयं मन्त्री पद से सन्तुष्ट रहा। इसीलिये ऊपर से देखने पर राजनैतिक क्षेत्र में मालवीय जी का स्वतंत्र व्यक्तित्व और नेतृत्व देखने में कम आता है पर जिनकी आंखें तेज है और बुद्धि तीव्र वह देख और जान सकते हैं कि अपने समय में देश की राजनीति की प्रगति को मोड़ने में वह अपना सानी नहीं रखते थे, उस पर उनका अधिक प्रभाव था, नेता भले ही कोई रहा हो। जैसा मैंने बार बार कहा है महात्मा जी और मालवीय जी में भेद करना भूल है। वह दोनों एक दूसरे के प्रति पूरक थे और मालवीय जी का सबसे बड़ा किस्सा भारतीय राजनीति में एक यह भी माना जा सकता है कि उन्होंने "दुधारी की धार" वाले ████ महात्मा गांधी के साथ भी देश के हित में न केवल निर्वाह किया बल्कि उनकी सक्रिय सहायता की अपने "स्व" की बलि देकर और भारतीय स्वतंत्रता के दुश्मनों की यह तमन्ना ████ उनके कारण सदा उनके दिलों में ही रह गयी कि यह दोनों महान शक्तियां आपस में टकरा जांय। मालवीय जी ने अपने "स्व" के लिये कभी दल बन्दी नहीं की, कांग्रेस की किसी नीति से असन्तुष्ट होकर उन्हें कभी दल बनाना भी पड़ा तो वह केवल क्षणिक रूप से और कांग्रेस नीति में सुधार होते ही वह फिर वैसे ही कांग्रेसी हो जाते थे जैसे पहले। वह बुद्ध और महावीर नहीं बने। शंकराचार्य ही वह सदा रहे।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

इसीलिये यदि आज के युग में, जब बुद्ध और महावीर की जयन्तियाँ मनाई जाती हैं पर शंकराचार्य को कोई पूछता ही नहीं, यदि मालवीय जी को भी लोग विस्मृत कर रहे हैं तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ?

कम्युनल एवार्ड सम्बन्धी चुनाव के सिलसिले में मालवीय जी लाहौर की एक सभा में भाषण कर रहे थे। कांग्रेस वालों ने शोर मचाया। किसी मनचले कांग्रेस भक्त ने उस सभा में एक ढेला भी फेंक दिया। यह घटना उस पंजाब प्रान्त में हुई जिसकी सेवा में मालवीय जी ने कभी कुछ उठा नहीं रक्खा, जहाँ उनकी पूजा होती थी और जिस पंजाब के सर्वोत्तम नेता और प्रतिनिधि लाला लाजपत राय जी मालवीय जी के सम्बन्ध में बराबर बड़े उग्र से कहा करते थे, ... इत्यादि।

पंडित योगीराज नजर सोहानवी उसी पंजाब के एक प्रसिद्ध शायर हुये हैं। उन्होंने गीता का बड़ा सुन्दर उर्दू अनुवाद 'कलामे रब्बानी' नाम से प्रकाशित हुई थी। उसके कवर के चौथे पृष्ठ पर योगीराज जी ने मालवीय जी को लक्ष्य कर लिखा है :

"महान आत्मा ! आप देहली कन्वेन्शन के सिलसिले में तशरीफ लाये। आपके पवित्र चरणों में सर झुकाने की हार्दिक इच्छा रखते हुये भी यह इज्जत हासिल कर सका इसलिये कि मैं भी उसी पंजाब का रहने वाला हूँ जिस पंजाब में कांग्रेस के चन्द खूबसूरत भेड़ियों ने आपका अपमान किया, आपकी हिन्दू हितों से भरी हुई बातें सुनने से इंकार किया, उस पंजाब के रहने वालों में जिनकी गरदन पर आपके बेन्तहा अहसान हैं। आपने उनको क्षमा कर दिया। आप ब्राह्मण हैं और पुरुषों में उत्तम हैं। यह आपका धर्म था, क्योंकि आप शान्ति के देवता हैं ......। महान्पुरुष ! आपकी बात नहीं सुनी गयी इसका कारण यह है कि अभी हिन्दुओं के बुरे दिन बाकी हैं। अभी इनको जिल्लतों की ठोकरें खानी हैं। आपने अपना फर्ज अदा कर दिया लेकिन आपका अपमान जिन लोगों ने किया उन्होंने धर्म का अपमान किया है। उन दुर्योधन के अनुयायियों ने कृष्ण का अपमान किया है, इस वास्ते उनकी रूहों को जहन्नम की भड़कती हुई आग में हमेशा के लिये डाल दिया जायगा। उनका कर्म ही ऐसा है। इस अजाब से उनकी रूहों को न आपकी क्षमा बचा सकती है, न कांग्रेस और न कांग्रेस के रहनुमा क्योंकि यह खुदावन्दे मुतलक का हुक्म है।"

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

सन् ४७ मे पंजाब मे जो कुछ हुआ हम सबके सामने है। इन सब बातों से सबक लेने की जरूरत है, मै तो इतना ही कहूंगा।

महात्मा गांधी जी के राजनैतिक गुरु महात्मा गोखले कहा करते थे कि भारत की दशा एक त्रिकोण के समान है जिसकी दो भुजाये मिलकर तीसरी भुजा से बड़ी होती है। भारत मे उसी तरह तीन प्रधान शक्तियों का संघर्ष है, हिन्दू, मुसलमान और ऐंग्लो इंडियन। इनमे से कोई दो मिलकर तीसरे को दबा सकते है। वह हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के प्रबल समर्थक थे। महात्मा गांधी उन्हीं की सीख पर चले। यहां तक कह दिया कि बिना हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के स्वराज्य मिल ही नहीं सकता। मालवीय जी भी ऐक्य के पक्षपाती थे और हृदय से चाहते थे कि हिन्दू मुसलमानों मे एकता हो जाय। पर उनका कहना था कि एकता चिरस्थायी तभी हो सकती है जब वह सत्य और समानता के सिद्धान्तों पर स्थित हो, कोई भी दल यह अनुभव न करे कि उसके साथ अन्याय हुआ और दोनों ही एक दूसरे की भावनाओं का न केवल आदर करे वरन् एक दूसरे के लिये कुछ स्वार्थ त्याग करने को भी तैयार रहे। एकता की एकतर्फी पुकार उसके लिये अपनी ओर से अत्यधिक उत्कंठा और उतावली प्रकट करना खतरनाक है और कांग्रेसी नेताओं का बार बार यह कहना कि बिना हिन्दू मुस्लिम एकता के स्वराज्य मिल ही नहीं सकता एक भयानक राजनैतिक भूल। हिन्दू हिन्दू मुस्लिम एकता के लिये जितना ही उत्सुक होंगे, जितना ही सिद्धान्तों का त्याग कर मुस्लिम सहयोग प्राप्ति का प्रयत्न करेंगे, मुसलमान उतना ही दूर होते जायेंगे साथ ही हिन्दुओं की शक्ति तथा आत्मविश्वास मे कमी आयेगी जो देश के लिये कभी श्रेयस्कर नहीं हो सकता क्योंकि बहुमत मे होने कारण देश की रीढ हिन्दू ही है। भूल से या जान बूझ कर मुसलमान अपने सहयोग को नीलामी बोली पर चढ़ाए हुये है। त्रिकोण की एक भुजा अर्थात् सरकार से नीलामी बोली मे हम कभी पार नहीं पा सकते क्योंकि उसकी अपनी जेब से कुछ नहीं जाता। उसे तो हिन्दू की जेब से निकाल कर मुस्लिम जेब मे रख देना मात्र है ऐसी दशा मे हिन्दुओं को या किसी भी राष्ट्रीय देशभक्त को हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के लिये अत्यधिक उत्सुक और उतावला होने की जरूरत नहीं। देश हमारा है। उसे स्वतंत्र करना हमारा काम है। वह कहते थे कि हिन्दू मुस्लिम समस्या तो जान बूझ कर हमको पथभ्रष्ट करने के लिये हमारी स्वतंत्रता के दुश्मनों ने जाल के रूप मे हमारे सामने फैला रक्खी है। उसमे हमे फंसना नहीं चा-

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

सरकार से हमें साफ कह देना चाहिये कि "तुम्हीं ने दर्द दिया है, तुम्हीं दवा देना।" हमारे साथ या किसी के साथ तुमने अन्याय किया तो हम बरदाश्त नहीं करेंगे, तुमसे लड़ेंगे भी क्योंकि यह सारा झगड़ा तुम्हारा ही उठाया और बढ़ाया हुआ है। इसे हल करने की जिम्मेदारी भी हमारी नहीं तुम्हारी है।

मुसलमानों से उनका कहना था कि तुम अपने धर्म पर मजबूत रहो, हम अपने धर्म पर दृढ़ रहें, न तुम हमें दबाओ और न हम तुम्हें दबावें। तुम छोटे भाई हो इस नाते हम तुम्हारे साथ उदारता बरतने को भी तैयार हैं पर यदि तुम हमारे दुश्मनों से मिलकर हमारे साथ जबरदस्ती करना चाहो तो हम दबने के भी नहीं। न्याय और सत्य की रक्षा के लिये हम बड़ा से बड़ा त्याग भी कर सकते हैं।

हिन्दुओं से उनका कहना था कि मजबूत बनो। अपनी कमजोरियों को दूर करो। संकीर्णता छोड़ो। न अन्याय करो, न उसे सहन करो। बड़ी से बड़ी शक्ति के सामने भी भयवश सर न झुकाओ। अन्याय करने वाले से अन्याय का सहन करने वाला कहीं अधिक दोषी है। कमजोरी ही सब पापों की जड़ है। "भय काहू को देत ना, ना भय मानत आप" तुम्हारा सिद्धान्त होना चाहिये। संगठित हो क्योंकि संघे शक्तिः कलौयुगे। और अपने धर्म पर दृढ़ रहो इस विश्वास के साथ कि "जो दृढ़ राखे धर्म को तेहि राखे करतार"।

सारांश में देश की स्वतंत्रता के मार्ग में सबसे बड़े रोड़े साम्प्रदायिक समस्या का मालवीय जी का यह हल था। गांधी जी और कांग्रेस ने उनकी बात नहीं मानी। अभागी हिन्दू जाति ने भी अपने सब से बड़े नेता, शुभ चिन्तक और सेवक की नीति को छोड़कर दूसरा रास्ता अपनाया। उसका फल भी सामने है। हिन्दू मुस्लिम समस्या आज भी हल नहीं हुई है। कांग्रेस नेताओं ने समझा था कि पाकिस्तान दे देने के बाद यह समस्या समाप्त

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

हो जायगी। आप और हम देख ही रहे है कि पाकिस्तान बन जाने से समस्या सुलझी नहीं और भी उलझ गयी है। त्रिकोण [illegible] आज भी उसी तरह मौजूद है। उसकी दो भुजाये तो पहली वाली ही है, हाँ तीसरी भुजा अब कुछ विस्तृत हो गयी है। वह बदल भी सकती है। इस भयावह समस्या का एक ही हल था, है और सदा रहेगा और वह हल वही है तो देश को मालवीय जी महराज दे गये है। भुजाओं के जोड़ जाड़ से काम नहीं चलेगा। जरूरत है अपनी भुजा को मजबूत, शक्तिशाली और ऐसी बनाने की कि दोनों भुजाये मिलकर भी हमारा कुछ बना बिगाड़ सकना तो दूर हमारी ओर आंख उठाकर देख सकने की भी हिम्मत न कर सके। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि देश को जीवित रखना है, महान हिन्दू जाति को फिर दासता के दुर्दिन देखने बदा नहीं है तो आज नहीं तो कल और कल नहीं तो परसों उस महर्षि की द्वारा बतलाये हुये मार्ग पर हमे चलना ही होगा उसके बिना हमारा निस्तार नहीं।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

मालवीय जी ने कहा था, "तीस करोड़ हिन्दू यदि मजबूत, तगड़े और संगठित हो जाँय तो भी स्वराज्य मिल जायगा। यह कमजोर और असंगठित रहे तो स्वराज्य कभी मिल नहीं सकता। मिलेगा भी तो वह सच्चे मानियों में भारतीय न होगा क्योंकि भारत की सभ्यता और संस्कृति हिन्दुओं की सभ्यता और संस्कृति है। मुसलमान और ईसाई जन्मना भारतीय होते हुये भी विदेशी सभ्यता और संस्कृति से प्रेरणा पाते रहे हैं और उसके पोषक हैं। स्वराज्य के कोई अर्थ नहीं रह जाते यदि हम अपने राज्य में अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता की रक्षा न कर सकें या उसे मिट जाने दें"

पंजाब केसरी स्वर्गीय लाला लाजपत राय जी ने इसी बात को बहुत स्पष्ट शब्दों में यों कहा करते थे कि "यदि ईसाई बनकर हमें स्वराज्य मिले तो हमें ऐसा स्वराज्य नहीं चाहिये।" मालवीय जी धर्म को सभ्यता और संस्कृति से मिलाते नहीं थे। धर्म अलग चीज है, सभ्यता और संस्कृति बिलकुल अलग चीज। धर्म के मामले में मालवीय जी अत्यधिक उदार थे। व्यक्तिगत रूप से अपने धार्मिक विश्वासों में वह जितने ही कट्टर थे उतने ही वह दूसरों के धार्मिक विश्वासों के प्रति उदार थे। वह कभी भी जोर दबाव, लालच या भय से किसी के धार्मिक विश्वासों में परिवर्तन लाने के अत्यधिक विरोधी थे। प्रयाग के मशहूर दायरा शाह अजमल के गद्दी नशीन, प्रान्तीय जमीयतुल उल्मा के सभापति मौलाना शाहिद फखरी अभी जीवित हैं। वह एक घटना अपनी सुनाते हैं। उनका कहना है कि एक बार वह मालवीय जी के साथ एक ही ट्रेन से चुनावों के सिलसिले में कहीं जा रहे थे। दोनों एक ही डिब्बे में थे। शाम हो चुकी थी। मालवीय जी सन्ध्या करने की तैयारी में थे। नमाज का वक्त भी हो चुका था पर मैं :मौ॰शाहिद: सकुचा रहा था कि मालवीय जी के सामने नमाज कैसे पढ़ूं। इधर मालवीय जी परेशान थे कि यह कैसा मौलवी है जो शाम की नमाज कजा कर रहा है। मौलाना शाहिद के पिता मालवीय जी के मित्र थे और इस नाते वह मौलाना को अपना भतीजा मानते थे और उन पर अपना अधिकार समझते थे। उन्होंने मौलाना से कहा, "बेटा शाहिद। क्या बात है? शाम का वक्त हो गया। तुम क्या नमाज नहीं पढ़ते? अपने मजहब का पालन तो तुम्हें करना ही चाहिये। उठो, नमाज पढ़ो।" और मौलाना ने उन्हें अपने दिल की सच्ची बात बताकर नमाज पढ़ी। मालवीय

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

जी मौलाना के हृदय की बात जानकर खूब हँसे और समझाया "बेटा, मैं यह कब कहता हूँ कि सारे मुसलमानों को हिन्दू बना लो। मैं तो केवल यह कहता हूँ कि हिन्दू मुसलमान ईसाई सब अपने अपने धर्म पर दृढ़ रहें, अपने अपने धार्मिक विश्वासों के अनुसार आचरण करें, सब लोग सच्चे अर्थों में धार्मिक बनें, कोई कहीं से कमजोर न हो तभी सबमें सच्ची दोस्ती होगी और तभी देश का कल्याण होगा। हम सभी एक ही ईश्वर के बन्दे हैं न ? रास्ता अलग अलग होने से क्या होता है ?"

उनके हिन्दुत्व की व्याख्या भी बहुत विशाल थी। पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने ठीक ही लिखा है कि मालवीय जी का हिन्दुत्व किसी खास विचार का वाचक नहीं, राष्ट्र विशेष का वाचक है, जिसमें मूर्तिपूजक ही हिन्दू नहीं, आर्य समाजी, सिख और बौद्ध भी हिन्दू हैं, जिसमें वेदानुयायी आस्तिक की तरह और नास्तिक भी अपने को हिन्दू कहता है, अघोर पन्थी औघड़ जो मुर्दा खाते हैं वे भी हिन्दू हैं और श्री सम्प्रदाय वाले आचारी भी हिन्दू हैं, जिसमें उन अछूतों को भी हिन्दू होने का गर्व होता है जिनको छूकर ब्राह्मण स्नान करते हैं। जिसमें कलकत्ता, कुमारी, बूला और लंका से आकर काशी या प्रयाग में गंगा स्नान करके अपने को कृतार्थ मानने वाला भी हिन्दू है। इनके सिवा जिनमें भाषा भेद, आचार भेद, वेषभूषा भेद आदि अन्य कितनी ही विभिन्नतायें हैं, पर सबकी मूल संस्कृति एक है। सब कर्मफल और पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानते हैं, सब गौरक्षा चाहते हैं और सब राम और कृष्ण आदि हिन्दू देवताओं के उपासक हैं। इस तरह की एकता में अनेकता और अनेकता में एकता भारतवर्ष और हिन्दू जाति की खास विलक्षणता है। मालवीय जी उसी बहुमुखी हिन्दू जाति के नेता हैं। इसी से उसके हर एक मुख को आहार पहुँचाने के लिये उनके प्रयत्न भी बहुमुखी हैं।

यह अनेकता में एकता और एकता में अनेकता ही जहाँ एक ओर विशाल हिन्दू जाति के लिये वरदान साबित हुई है वहीं वह उसकी कमजोरी का कारण भी बनी है। मालवीय जी उस वरदान को स्थायी रखते हुये भी तज्जनित कमजोरी को हिन्दू समाज से दूर कर देने का प्रयत्न यावज्जीवन करते रहे। उनके इस प्रयत्न में किसी के लिये भी घृणा का कोई स्थान न था। मुसलमान, ईसाई, पारसी सभी उन्हें प्रिय थे। सभी को वह मजबूत देखना चाहते थे। इन सबकी अपेक्षा हिन्दू अपनी उपरलिखित कमजोरी के कारण अधिक कमजोर थे,

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

अधिक जोर थे, बहु संख्या भी उन्हीं की थी, उसी जाति में उन्होंने स्वयं जन्म लिया था, इस कारण वह उनकी ओर अधिक ध्यान देते थे और पहले घर में चिराग जलाकर ही मस्जिद में चिराग जलाना चाहते थे। धार्मिक और सामाजिक मामलों में हिन्दुओं की समस्याओं को वह अधिक समझते थे और उन पर अधिक अधिकार के साथ वह बोल भी सकते थे। दूसरों के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप करने में उन्हें संकोच भी होता था कि कहीं वे उसे नापसन्द न करें। गांधी जी ने हस्तक्षेप किया। बहुत ही शुद्ध नीयत से उन्होंने अपनी प्रार्थना में कुरान की आयतों, बाइबिल की प्रार्थनाओं इत्यादि को शामिल किया पर क्या दूसरों ने उनकी इस सद्भावना का आदर किया या उससे प्रभावित हुये? महात्मा जी की इच्छा के ठीक विपरीत अधिकांश मुसलमानों ने तो महात्मा जी के इस प्रयत्न को सदैव शंका की दृष्टि से ही देखा और कहते रहे कि महात्मा जी तो कुरान की आयतें अपनी प्रार्थना में शामिल करके हमसे "रघुपति राघव राजा राम" कहलाना चाहते हैं। हम "रघुपति राघव राजा राम" क्यों कहें और क्यों मानें?

दुनिया जानती है कि मिस्टर जिना ने महात्मा जी को सदैव कड़ी से कड़ी बातें कहीं पर मालवीय जी की शान के खिलाफ उन्होंने कभी एक शब्द भी नहीं कहा। मालवीय जी के प्रति उनका सदैव ही आदर भाव रहा। हिन्दू नेता होने के नाते विरोध तो जिना साहब और मालवीय जी में होना चाहिये था। हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के पैगम्बर होने के नाते जिना साहब और महात्मा जी में प्रेम सम्बन्ध होना चाहिये था। तर्क तो यही कहता है। पर घटनायें ठीक इसके विपरीत कहलाती हैं। हिन्दू मुस्लिम समस्या को हल करने का रास्ता किसका अधिक सही था, मालवीय जी का या महात्मा जी का, यह एक इसी बात से प्रत्यक्ष है।

पर इससे कोई यह न समझे कि मैं महात्मा जी को हिन्दुत्व विरोधी या हिन्दुओं का दुश्मन मानता हूँ। ठीक इसके विपरीत मैं महात्मा जी और मालवीय जी दोनों को ही कट्टर हिन्दू मानता हूँ। दोनों एक दूसरे के हृदय से परिचित थे और इसी लिये एक दूसरे को इतना अधिक प्यार करते थे। इनको आपस में लड़ाने के बड़े बड़े प्रयत्न हुये, बहुत चालें चली गईं, कभी मालवीय जी को साम्प्रदायिक नेता कहकर बदनाम किया गया और गांधी जी को सन्त कहलाकर उनको सातवें आसमान पर चढ़ाया गया।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

कभी गांधी जी को कट्टर हिन्दू और आस्तीन का साँप कहकर व मालवीय जी की ईमान्दारी की प्रशंसा के पुल बाँधे गये पर इन दोनों महात्माओं पर इस निन्दा स्तुति का कोई प्रभाव पड़ा नहीं, वह दोनों ही अडिग रहे और इन्होंने अपने आपसी स्नेह बन्धन को अन्त समय तक ढीला तक नहीं पड़ने दिया, तोड़ना तो दूर रहा। इसी का परिणाम था कि महाकवि अकबर तक ने लिख मारा :

"गांधी और माल्वी हैं गो एक दिल,
इख्तलाफात कुछ हुये जाहिर।
मुख्तलिफ नाम के हैं दोनों सिरे,
गाव दुम होके रह गये आखिर।।"

मैंने ऊपर जो कुछ लिखा है वह महज यह दिखलाने के लिये कि हिन्दू मुस्लिम समस्या को हल करने के उद्देश्य से हमारे दो महानतम नेताओं ने दो रास्ते अपनाये। एक अपने को मजबूत करके मुसलमानों को साथ लेने का रास्ता दिखला रहा था, दूसरा मुसलमानों को अपने साथ करने के लिये कोई भी कीमत देने को तैयार था, अपना नुकसान करके भी यहाँ तक कि कोरी चेक देने में भी उसे आपत्ति न थी। हिन्दुओं ने एक की बात मानी, एक की नहीं मानी। गांधी जी के रास्ते पर अमल किया गया। साम्प्रदायिक निर्णय जैसे राष्ट्रीय प्रश्न पर कांग्रेस राष्ट्र की प्रतिनिधि चुप्पी लगा गई, उसका विरोध नहीं किया। सारा देश गांधी जी के जयनाद से गूँज उठा। मालवीय जी को साम्प्रदायिक कहकर गालियाँ दी गईं। गांधी जी के रास्ते पर चलने का परिणाम आज हमारे सामने है। जो कुछ वह चाहते थे, उनके रास्ते पर चलने का परिणाम, ठीक उसके विपरीत हुआ। अब जरूरत है रास्ता बदलने की और मालवीय जी द्वारा बतलाये गये रास्ते पर चलने की क्योंकि दूसरा कोई वैकल्पिक या विपरीत मार्ग नहीं है।

इसीलिये विभाजन के बाद एक संस्कृत कवि चीख उठा था :

"गांधी धृतान्धो, बधिरो जवाहिरः।
पन्तो धृतान्तः करुणः प्रतीयते।
महामना वृद्ध निंद निशम्य मे,
दुर्गुना हा हृदयं ददाह।।"

आइये, हम सब भी अपने इस कवि के आर्तनाद को सुनें, समझें और सारे भारत को मालवीय जी के जयनाद से एक बार फिर गुंजा दें। याद रक्खो यह होना ही है, न होगा तो भारत मिट जायगा, भारतीयता मिट जायगी और उसके साथ ही साथ वह सब मिट जायगा जो हमें प्राणों से बढ़कर प्यारा है। महान राष्ट्रीय कवि स्वर्गीय ब्रज नारायण "चकबस्त" की मालवीय जी के सम्बन्ध में एक बार लिखित इन पंक्तियों को विस्मृत होने देना आत्महत्या होगी :

"तुम्हारे वास्ते लाज़िम है मालवी का भी पास ।
कि जिसकी जात से अटकी हुई है कौम की आस ॥
लिया गरीब ने घर बार छोड़कर बनबास ।
जो यह नहीं है तो कहते हैं फिर किसे सन्यास ॥
तमाम उम्र कटी एक ही करीने पर ।
गिराया अपना लहू कौम के पसीने पर ॥
इसी के हाथ में है कौम का सँवर जाना ।
तुम्हारी डूबती किश्ती का फिर उभर जाना ॥
जो तुमने अब भी न दुनिया में काम कर जाना ।
तो यह समझ लो कि बेहतर है डूब मर जाना ॥
गज़ब हुआ जो दिल इसका भी तुमसे ऊब गया ।
गिरा इस आँख से आँसू तो नाम डूब गया ॥
मगर जो ख्वाब से अब भी न तुम हुये बेदार ।
तो जान लो कि है इस कौम की चिता तैयार ॥
मिटेगा दीन भी और आबरू भी जायेगी ।
तुम्हारे नाम से दुनिया को शर्म आयेगी ॥
करो खुदा के लिये कुछ मरे हुओं का ख्याल ।
न हों तुम्हारे बुजुर्गों की हड्डियाँ पामाल ॥
यह आबरू तो हजारों बरस में पाई है ।
न यों लुटाओ कि ऋषियों की यह कमाई है ।।।
है जो हिम्मत मर्दाना कौम को दरकार ।
वरक उलट दो जमाने का मिलके सब एक बार ॥
जो गैर हैं उन्हें हँसने की आरज़ू रह जाय ।
गरीब कौम की दुनिया में आबरू रह जाय ॥"

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

यह कहना या समझना कि विभाजन के व्दारा साम्प्रदायिक समस्या हल हो गई अथवा वह अब नहीं रही गलत है। हाँ अब आप उसे हिन्दू मुसलमान समस्या या साम्प्रदायिक समस्या न कहकर भारत और पाकिस्तान समस्या और राष्ट्रीय समस्या कह सकते हैं। भेद आया है तो केवल इतना ही अर्थात् नाम मात्र का। वास्तविक बात वही है जो पहले थी और वह तब तक हल नहीं होगी जब तक कि मुसलमान या पाकिस्तान प्रेम अथवा शक्ति से भारत के साथ मिलकर रहने को तैयार नहीं किये जा सकते। और ऐसा तो होना ही है, अनिवार्य है, आज नहीं तो कल और कल नहीं तो परसों वरना भारत के रहते हुये न पाकिस्तान वाले चैन की नींद सो सकते हैं और न पाकिस्तान के रहते हुये भारतीय निश्चिन्तता की नींद सो सकेंगे। समय ने सिद्ध कर दिया कि कांग्रेस की हिन्दुओं को दबाकर हिन्दुओं के स्वार्थों की बलि देकर, मुसलमानों को किसी भी मूल्य पर प्रसन्न करने और हिन्दू मुस्लिम ऐक्य स्थापित करने की सारी महत्वाकांक्षा आज धूल धूसरित हो चुकी है, इस सम्बन्ध में किये गये उनके सारे प्रयत्न बालू का पुल बाँधने के ही सिद्ध हुये और उनका एतत्सम्बन्धी हल बेकार साबित हुआ। इतना ही नहीं उसके प्रयत्नों ने समस्या को सुलझाने के स्थान पर उलझाया ही अधिक है।

पूज्य मालवीय जी व्दारा बतलाया गया इस समस्या का हल ही ठीक और उचित था और उन्हीं के व्दारा बतलाये गये मार्ग पर चलकर हमें सफलता प्राप्त हो सकती है आज यह एक प्रकार से प्रत्यक्ष हो चुका है भले ही कोई माने या न माने। उनका हल क्या था ? बहुत छोटा सा, बहुत सीधा सादा। वह कहते थे हिन्दुओं को संगठित करो, उन्हें मजबूत बनाओ, मुसलमान अपने आप साथ आयेंगे जब वह देख लेंगे कि हिन्दुओं को हम अन्याय से दबा नहीं सकेंगे और यह कि हिन्दुओं से मिलकर रहने में ही हमारा भला है। वह कहते थे, "बिन भय होय न प्रीति" और यह कि "भय काहू को देत ना, ना भय मानत आप"। अर्थात् न तुम किसी पर अन्याय करो और न किसी दूसरे का अन्याय बरदाश्त करो। अन्याय करना और अन्याय सहना दोनों ही पाप है। आज इसी बात को आप इस तरह कहिये कि भारत को संगठित करो, उसे मजबूत बनाओ, पाकिस्तान अपने आप साथ आयेगा जब वह देख लेगा कि भारत को हम अन्याय से दबा नहीं सकेंगे और यह कि भारत से मिलकर रहने में ही हमारा भला है। हिन्दू शब्द के स्थान पर भारतीय शब्द का परिवर्तन मात्र हुआ है।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

यह भी कोई नई बात नहीं है। मालवीय जी सदा कहते थे कि भारत हिन्दुओं का देश है और उसकी रक्षा और उन्नति की जिम्मेवारी भी उन्हीं पर सर्वाधिक है। भारत में रहने वाले, उसे उसकी सभ्यता और संस्कृति पर प्रेम रखने वाले प्रत्येक भारतवासी को वह हिन्दू मानते थे। आज भी सच्चा भारतीय वही है जिसे भारत, उसकी सभ्यता और संस्कृति से प्रेम है। महज भारत में पैदा हो जाने मात्र से कोई सच्चा भारतीय नहीं बन जाता और उसे भारतीय समझना खतरे से खाली भी न होगा।

तो अन्त में जीत किसकी रही ? कांग्रेस के सिद्धान्तों की या मालवीय जी के सिद्धान्तों की ? महात्मा जी राष्ट्रपिता माने जाय, कांग्रेसी राज्य हो, मालवीय जी, एक कांग्रेसी लेखक के शब्दों में, राजनीति में काल के दरवाजे से आते हुये दिखलाई दें, यह सब तो उनके जीवन काल में ही एक गौड़ प्रश्न थे और आज भी है। गांधी जी को आगे रखकर स्वयं पीछे रहना यह तो उनका जीवन क्रम ही था। उन्होंने सदा दूसरों को आगे रखकर पीछे से "स्व" किया उनमें कमी था ही नहीं। हाँ हम आज अगर मालवीय जी को पीछे रखते हैं, उनका स्थान उन्हें नहीं देते तो यह दोष मालवीय जी या उनके कार्यों का नहीं, हमारी अपनी बुद्धि और समझ का है, हमारी कृतज्ञता या अकृतज्ञता सम्बन्धी भावना का है। इन सबसे मालवीय जी की महानता कम नहीं होती, न कभी हो सकती है।

पाकिस्तान के सम्बन्ध में पूज्य नेहरू जी की नीति की जब आज कुछ लोग अतिशय निन्दा करते हैं तो मुझे दुख होता है। उनकी नीति बिलकुल साफ है। मेरी समझ में वह बहुत कुछ मालवीय जी की नीति पर ही चल रहे हैं। नेहरू जी जानते हैं कि पाकिस्तान को शक्ति से न तो मिटाया जा सकता है और न शक्ति से मिटाकर या जबरदस्ती दबाकर उसे अपने साथ लाना श्रेयस्कर और लाभप्रद होगा। वह बिलकुल ठीक कहते हैं कि पाकिस्तान जिये, प्रसन्न रहे, फूले,फले, हम उसके अस्तित्व को शक्ति से मिटाने की बात भी नहीं सोचते, न सोचेंगे। बिलकुल ठीक बात है। मालवीय जी कब चाहते थे कि मुसलमान भारत से निकाल दिये जाय, उनका अस्तित्व मिटा दिया जाय,या जबरदस्ती उन्हें हिन्दू बना लिया जाय। उनके भाषणों के कुछ अवतरण मैं यहां दे रहा हूं। जरा पढ़िये और समझिये।

भारत वर्ष यहां की रहने वाली सब जातियों की जन्म भूमि है। जैसे वह हिन्दुओं की है, प्राय: वैसे ही वह मुसलमानों की भी है।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

बहुत थोड़े से मुसलमान ऐसे होंगे जो हिन्दुस्तान से बाहर के हों, बाकी सबका वतन सिवा हिन्दुस्तान के दूसरा नहीं है। हमें यह भली प्रकार सोच लेना चाहिये कि हमें अपनी मातृभूमि में रहना है और यहीं हमें मरना है, इसी में हमारा पालन हुआ है और यहीं की मिट्टी में हमारी भस्म अथवा मिट्टी मिलेगी। हम सब एक ही परमात्मा की सन्तान हैं।

मैं हृदय से चाहता हूँ कि हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के साहित्य का अध्ययन करें जिसमें वे एक दूसरे की विशेषताओं को समझ सकें।

हाल के हिन्दू मुस्लिम दंगों के विषय में भी मैंने विचार किया है। मेरे विचार से कई दंगे तो हिन्दुओं की कायरता और निर्बलता के कारण ही हुये हैं। अतः यह राष्ट्रीय आवश्यकता है कि हिन्दुओं की जिस दुर्बलता के कारण अनेक दंगे हुये, वह दूर कर दी जाय।

राष्ट्रवाद और जातिवाद एक साथ नहीं ठहर सकते। एक के आने से पूर्व दूसरे का जाना अनिवार्य है। राष्ट्र हित की दृष्टि से मैं जातिगत प्रतिनिधित्व का घोर विरोधी हूँ पर जब तक मुसलमान स्वेच्छा से इसका दावा त्याग देने को तैयार नहीं होते तब तक हम भी इसे नहीं छोड़ सकते।

मेरी हिन्दुओं और मुसलमान दोनों से यही प्रार्थना है कि वे एक होकर रहें। संगठन में ही बल है, संगठन में ही शक्ति तथा संगठन में ही राष्ट्र को ऊपर उठाने का मूल मंत्र है। देश दोनों का है। हिन्दू भी यहीं रहेंगे मुसलमान भी यहीं रहेंगे। भलाई इसी में है कि दोनों साथ साथ रहें, प्रेम से रहें और सोलहों आने राष्ट्रवादी बनने का प्रयत्न करें।

तमाम हिन्दू मुसलमान भाई नागरिक सेना कायम करो और आगे के लिये मुल्तान की घटना को गैर मुमकिन बनाओ। पिछली बातों को भूल जाओ। याद रखो कोई शेर की कुर्बानी नहीं देता। कुर्बानी के लिये भी बकरे को ही चुना जाता है। मेरे मुसलमान भाइयों, कुर्बानी आप ही नहीं देते। हिन्दू भी देते हैं। मुझे मुआफ करना, मैं दोनों को ही बेजा समझता हूँ। खुदा के लिये किसी जीव की जान लेने का हमें कोई हक नहीं है। कमजोर होना ही मुसीबत का घर है।

जब तक हिन्दू और मुसलमान दोनों ही इतने बलवान और संगठित नहीं हो जाते कि वे दूसरी जाति के गुंडों और बदमाशों से अपनी रक्षा कर सकें तब तक उनमें एकता स्थापित नहीं हो सकती । ..... मैं अपने अनुभव से कहता हूँ कि हिन्दू मुस्लिम एकता का एक मात्र साधन यही है कि इनमें से प्रत्येक इस बात को अच्छी तरह जान ले कि दूसरा उसके आक्रमण का जवाब देने के लिये पूर्ण तया तैयार है । केवल इसी विश्वास के होने पर परस्पर मैत्री की स्थापना हो सकती है ।

:गया हिन्दू महासभा १९२२:

लेकिन यहाँ हमको यह भी सोचना है कि आखिर मेल क्यों नहीं है ? यह तो हर आदमी जानता है कि प्रीति बराबर वालों में होती है । कमजोर या शहजोर में प्रीति नहीं होती और यह कहते हमारे हृदय को दुःख होता है, वेदना होती है कि इस समय हमारे हिन्दू भाई समाज की रक्षा करने के लिये कमजोर हो गये हैं । हमारे अपमान का कारण मुसलमान नहीं है । हमारी दुर्बलता ही इसका कारण है । जिस दिन मुसलमानों को सबको नहीं कहता, हमारे शरीफ, अच्छे और भलेमानुस हैं , खराब तबीयत के मुसलमानों को यह मालूम होगा कि उनको एक प्रहार के बदले हिन्दू दो देंगे, उस दिन मेल पक्का होगा । लेकिन यह आप देश के लिये, धर्म के लिये और राष्ट्रीय कर्तव्य के लिये करें । मैं धर्म से , शपथ पूर्वक, गंगा के किनारे, विश्वनाथ पुरी में इस सभा के सामने कहता हूँ कि मेरे हृदय में चावल भर भाव नहीं है कि किसी दूसरे को चोट पहुँचाऊँ। हम प्रभुत्व भी नहीं चाहते, न हम किसी के ऊपर अधिकार ही चाहते हैं । चाहते हों तो परमात्मा हमें दंड दे । परन्तु यह मैं चाहता हूँ कि मैं मर जाऊँ, मेरे भाई बन्धु मर जाँय यदि हम इज्जत ,सम्मान और धर्म की रक्षा नहीं कर सकें ।

:काशी हिन्दू महासभा १९२३:

इस महासभा में खड़े होकर अपने मुसलमान भाइयों से मैं मातृप्रेम की भिक्षा माँगता हूँ । हम लोग तो वैसे ही कुचले जा रहे हैं फिर आपस में लड़कर अपने कष्टों को बढ़ाने का यत्न क्यों करें ? गोवध के सम्बन्ध में मैं अपने मुसलमान भाइयों को विश्वास दिलाना अब चाहता हूँ कि जो कुछ हिन्दू लोग उनके विरुद्ध कर बैठते हैं उसका कारण धर्म विषयक विश्वास है । यदि मुसलमानों का यह ख्याल

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

हों कि उनके धर्म की दृष्टि से गोवध करना अत्यन्त आवश्यक है तो मेरे दिल को कितना ही आघात क्यों न पहुँचे मैं आप अपनी आँखों के सामने गोवध देखने को तैयार हूँ ।

:दिल्ली कांग्रेस १६१८:

यह कभी मत भूलो कि हमारा देश भारतवर्ष है । इसमें भिन्न भिन्न धर्म के लोग बसते हैं । इस देश का भला इसी में है कि हम सबमें परस्पर मेल रहे । यदि यह याद रहा तो ठीक है, नहीं तो हिन्दू सभा निष्फल हो जायगी । यह याद रखो कि यदि गिरजे या मस्जिद की तरफ हमारी नजर उठे तो आदर की नजर उठे, यदि किसी मुसलमान या ईसाई के प्रति कोई शब्द निकले तो आदर का शब्द ही निकले । कमजोरी हो तो सह लेना पर दूसरों का दिल दुखाने वाला शब्द कभी न बोलना । याद रखो, बलवान ज्यादा सहन किया करता है । कमजोर को गुस्सा जल्दी आता है । यदि कुछ भाई मन्दिरों पर भी हाथ उठावें तो आप उनपर उतना ही हाथ उठाओ जितना उनकी दुष्टता को दबा सके । उनसे बराबर प्रेम रखो। एक अपनी विवाहिता स्त्री के सिवा अन्य सबको चाहे वे मुसलमान हों, चाहे ईसाई अपनी माता के समान समझो । कहीं ऐसा न हो कि किसी को यह कहने का मौका मिल जाय कि हिन्दू सन्तान अपने धर्म को तो बैठी है । अपना आचरण ऐसा बनाओ कि किसी मुसलमान या किसी ईसाई को शिकायत न हो । अपना लक्ष्य यही है :

सर्वे च सुखिन: सन्तु, सर्वे सन्तु निरामया: ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, माकश्चित दु:खमाप्नुयात् ।।

ऐसा लक्ष्य रखो कि उससे अपनी भी उन्नति हो और दूसरों का भी भला हो, कहीं कभी किसी का भी अमंगल न हो ।

:हिन्दू महासभा काशी:

परस्परं सुसुहृन्मानैरो राष्ट्रे यैर्षु विभि: ।
देश भक्तीर्भीलत्या च कार्या देश समुन्नति: ।।
मातृभूमि: पितृभूमि: कर्मभूमि: सुजन्मनाम् ।
भक्तिमर्हति देशो यं सेव्य: प्राणैर्धनैरपि ।।
ग्रामे ग्रामे सभा कार्या ग्रामे ग्रामे कथा शुभा ।
पाठशाला, मल्लशाला, प्रतिपर्व महोत्सव: ।।
स्त्रीणाँ समादर: रक्ष्या: मन्दिराणि तथा च गौ: ।
अहिंसका नहन्तव्या, आततायी बधार्ह: ।।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

विश्वासे दृढ़ता स्वीये, परनिन्दा विवर्जनम् ।
तितिक्षा मत भेदेषु प्राणि मात्रेषु मित्रता ।।
श्रूयतां धर्म सर्वं स्व, श्रुत्वा चाप्य वधार्यताम् ।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।
यदन्यैर्विहितं नेच्छेत्, आत्मनः कर्म पुरुषः ।
न तत्परस्य कुर्वीत जानन्न प्रिय मात्मनः ।।
जीवितं यः स्वयं चेच्छेत्, कथं सो न्यं प्रघातयेत् ।
यद्यदात्मनि चेच्छेत, तत्परस्यापि चिन्तयेत् ।।

:हिन्दू धर्मोपदेश से:

अर्थात् देश की उन्नति के कामों में जो पारसी, मुसलमान, ईसाई, यहूदी देश भक्त हों उनके साथ मिलकर भी काम करना चाहिये। यह हमारी मातृभूमि है, यह हमारी पितृभूमि है। जो लोग पुन्यात्मा हैं :जिनके जीवन बहुत अच्छे हुये हैं जैसे, राम, कृष्ण, बुद्ध आदि महा पुरुषों, महात्माओं, आचार्यों, ब्रह्मर्षियों, राजर्षियों, गुरुओं, धर्मवीरों, शूरवीरों, दानवीरों, देशभक्तों की: यह कर्म भूमि है। इस देश में हमको परम भक्ति रखनी चाहिये और प्राण तथा धन से भी इसकी सेवा करनी चाहिये।

गांव गांव में सभा बनानी चाहिये, सभायें बिठानी चाहिये, पाठशाला, अखाड़े स्थापित करने चाहियें तथा पर्व पर्व पर महान् उत्सव मनाने चाहियें।

स्त्रियों का सम्मान करना चाहिये, मन्दिरों तथा गौ की रक्षा करनी चाहिये। जो अहिंसक हैं उन्हें न मारना चाहिये पर जो आततायी हों उन्हें मारना उचित है।

अपने विश्वास में दृढ़ता, दूसरे की निन्दा का त्याग, मतभेद में सहन शीलता और प्राणिमात्र से मित्रता रखनी चाहिये।

सुनो धर्म के सर्वस्व को और सुनकर उसके अनुसार आचरण करो। जो काम अपने को बुरा लगे और दुखदायी जान पड़े उसको दूसरे के साथ मत करो।

मनुष्य को चाहिये कि जिस काम को वह नहीं चाहता कि दूसरे उसके साथ करें उस काम को वह भी किसी दूसरे के साथ न करें।

जो चाहता है कि मैं जिऊं वह कैसे दूसरे का प्राण हरने का मन करे ? जो जो बात मनुष्य अपने लिये चाहता है वही वही उसे औरों के लिये भी सोचनी चाहिये।

आज बेचारे नेहरू जी भी तो यही कह और कर रहे हैं। वह निन्दनीय तब हो सकते हैं जब वह भारत को कमजोर करें और मजबूत न बनावें। क्या आज वह भारत को हर प्रकार से सुदृढ़ और मजबूत नहीं बना रहे हैं? क्या भारत के मान को उन्होंने समस्त दुनिया की दृष्टि में आज ऊंचा नहीं उठाया है? क्या वह पाकिस्तान से डरते हैं? फिर उनकी निन्दा क्यों? वह यही तो कहते हैं न कि पाकिस्तान के प्रति भारत की नीति "जियो और जीने दो" की है, हम पाकिस्तान को मिटाना नहीं चाहते, भारत में रहने वाले हिन्दू मुसलमान ईसाई सबको समान अधिकार है, कोई किसी पर अन्याय नहीं कर सकता, तो इसमें वह गलत बात वह क्या कहते या करते हैं? इतना बड़ा हिन्दू राष्ट्र अशोक के बाद आज तक कब और कहां कायम हुआ था? मैं तो नेहरू जी को आधुनिक अशोक मानता हूं। हां, थोड़ा बहुत मतभेद नीतियों के सम्बन्ध में हमारा उनका हो सकता है पर वह ऐसे मतभेद हैं जो सदा रहे हैं और रहेंगे। वह धर्म और ईश्वर का नाम नहीं लेते, न सही, पर है आज उनसे बड़ा इस देश में कोई धार्मिक आचरण का व्यक्ति? धर्म धर्म की रट लगाने वाले, रात दिन राम नाम का जप करने और लम्बा टीका लगाने वालों को मैंने सबसे अधिक धर्म और सत्य की हत्या करते देखा है। नेहरू जी धर्म या ईश्वर का नाम नहीं लेते पर मैं जानता हूं कि सत्य और न्याय के लिये मर मिटने वाला आज इस देश में उनके जैसा दूसरा व्यक्ति ढूंढे नहीं मिलेगा। नेहरू जी को मैं मालवीय जी की नीति पर चलने वाला उनका सर्वोत्तम उत्तराधिकारी मानता हूं। भेद है तो इतना ही कि नेहरू जी अपने को हिन्दू नहीं कहते, राम कृष्ण, गंगा, गीता, गायत्री, गौ पर ऊपर से वह उतनी श्रद्धा नहीं प्रकट करते जितनी एक साधारण हिन्दू प्रकट करता है, कभी कभी तो इनका मजाक भी बना देते हैं पर इससे क्या वह हिन्दू नहीं रहे? हमें इस बात की प्रसन्नता भी है कि हमें उन महान आत्माओं में से एक ऐसी आत्मा को जानने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था जिन्हें भारत ने अनादि काल से जन्म दिया है। यद्यपि वे हमारे बीच में अब नहीं रहेंगे किन्तु स्वतंत्र भारत के ढांचे में वे अवश्य विराजमान रहेंगे जिसे नींव डालकर उन्होंने खड़ा किया है। हमें पंडित मालवीय का पथानुगामी बनना चाहिए। नेहरू जी को मालवीय जी कितना प्यार करते थे यह कोई नेहरू जी से पूछे। मालवीय जी की मृत्यु पर नेहरू जी ने अश्रुपूरित नयनों और रुंधे हुये गले से ऐसेम्बली में कहा था, हमें यह सोचकर अपार दुख होता है कि अब हम उस ज्वलंत नक्षत्र को न देख सकेंगे जिसने हमारे जीवन प्रांगण में प्रकाश बिखेरा, जिसने हमें लड़कपन से प्रोत्साहित किया और जिसने हमें अपनी मातृभूमि को प्यार करना सिखाया था।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

राजनैतिक दृष्टि से आपने देखा कि मालवीय जी ने सन् १९२० की कलकत्ता कांग्रेस में जो कार्य क्रम देश के सामने रक्खा था वह समानान्तर सरकार का था । हाँ, उस में कहीं भी समानान्तर सरकार का नाम नहीं आया था । मालवीय जी शब्दों के पीछे कभी नहीं दौड़े । पूर्ण स्वतंत्रता शब्द से उन्हें नर्म दलीय नेताओं की तरह डर नहीं लगता था । १९२० में ही उन्होंने उस शब्द का व्यवहार किया था । स्वराज्य का अर्थ न तो वह महात्मा जी की तरह राम राज्य बतलाते थे और न ही पं० नेहरू की तरह पूर्ण स्वराज्य । वह कहते थे कि इंगलैंड में अंग्रेजों को जैसी स्वतंत्रता है वैसी ही स्वतंत्रता हमें चाहिये न कम न ज्यादा और उनका विश्वास था कि अंग्रेजों के साथ रहते हुये भी पूर्ण स्वतंत्रता हमें मिल सकती है वैसे ही जैसी आज मिली हुई है । यह पहला कदम होगा । जिस दिन हम देखेंगे कि इंगलैन्ड के साथ रहने में हमारा नुकसान है उसी दिन हम इंगलैंड से अलग हो जायेंगे । समय ने दिखला दिया कि उनका कहना ही उचित और राजनैतिक था । पूर्ण स्वतंत्रता शब्द को महज दूसरों को भड़काने और भारतीय राजनीति में अनैक्य पैदा करने के उद्देश्य से चुनाव का नारा बनाने के वह पक्षपाती नहीं थे । यों तो मद्रास कांग्रेस में भी उन्होंने पं० जवाहर लाल जी नेहरू के पूर्ण स्वतंत्रता सम्बन्धी प्रस्ताव का समर्थन किया था ।

मालवीय जी राजनैतिक जादूगरी में विश्वास नहीं करते थे । अपनी बात को सीधे सादे रूप से वह सबके सामने रख देते थे । स्वराज्य की उनकी व्याख्या थी अपने देश में अपना राज । इससे अधिक या कम कुछ नहीं ।

देश के औद्योगीकरण के वह पूर्ण पक्षपाती थे । ग्रामीण उद्योग धन्धों की आवश्यकता वह स्वीकार करते थे किन्तु उनका कहना था कि दुनिया की प्रगति में युग के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने के लिये यह आवश्यक है हम अपनी उन्नति के लिये विज्ञान की पूरी सहायता लें । इस बात को साफ करने के लिये यहाँ एक घटना का जिक्र कर देना मौजूं न होगा । याद नहीं पड़ता यह कथा आपके इस बोर्डिंग हाऊस से सम्बन्धित है या हिन्दू विश्व विद्यालय से पर है वह सम्बन्धित इन्हीं दोनों में से एक से सम्भवत: इसी आपके बोर्डिंग हाऊस से ।

कहा जाता है मालवीय जी के साथ इसे देखने के लिए एक बार महात्मा जी आये । निरीक्षण कर चुकने के उपरान्त उन्होंने कहा, पंडित जी, आपने भवन तो बड़ा सुन्दर निर्माण कराया पर मैं तो इसे

देखकर चिन्तित हो गया हूँ। यह ऊँचा और पक्का महल जैसा भवन, बिजली की रोशनी से जगमगाते सुन्दर स्वच्छ और भव्य कमरे। ऐसे महल जैसे स्थान पर वर्षों रहने के बाद ग्रामीण विद्यार्थी क्या वापस अपने ग्रामों में जायेंगे और वहाँ अपनी झोपड़ियों में रहना पसन्द करेंगे? यह तो आप उनकी आदतें खराब कर रहे हैं और इससे देश का नुकसान होगा। मालवीय जी हँस पड़े और उन्होंने मुस्कराते हुये गांधी जी से कहा, "आप ठीक कह रहे हो। पर मैं अनजान में नहीं जानबूझ कर अपने ग्रामीण विद्यार्थियों की आदत को खराब कर रहा हूँ। हाँ मैं यह कभी नहीं चाहता कि इन महलों में रहने के कारण वह अपने ग्रामों को भूल जायें या शहरों में ही आकर रहने लगें। मेरी इच्छा और अभिलाषा तो यह है कि वह अपने अपने ग्रामों में वापस जाकर अपनी आदत की मजबूरी के कारण ही सही वहाँ भी ऐसे ऐसे महल निर्माण करें, बिजली की रोशनी से जगमगाते हुये और बिना ऐसा किये उन्हें चैन न आये। इसी में देश का कल्याण है। हम झोपड़ियों में ही क्यों रहें? अपनी झोपड़ियों को महलों में परिवर्तित करने का स्वप्न तो हमें देखते ही रहना चाहिये।"

यह विवरण दोनों महात्माओं की विचारधाराओं को हमारे सामने सुन्दर रूप से रख देता है। इन मामलों में जापान उनका आदर्श था और जापान द्वारा प्रदर्शित दिशा की ओर ही वह भारत को ले जाना चाहते थे।

मालवीय जी जापान की प्रगति से बहुत प्रसन्न रहते थे और उसकी अर्थ व्यवस्था को एशिया के देशों के लिये अनुकरणीय समझते थे। जापान की उन्नति को वह एशिया की उन्नति मानते थे। वह पश्चिमीय साम्राज्यवाद तथा समस्त मुस्लिम जगत के ऐक्यवाद इन दोनों की रोकथाम के लिये दक्षिण पूर्वी एशिया का संगठन जरूरी समझते थे और जापान से उन्हें इस दिशा में नेतृत्व की बहुत आशा थी। उनकी धारणा थी कि चीन, जापान, बर्मा और भारत मिलकर सारे संसार का मुकाबिला कर सकते हैं। जब कांग्रेस के बहुत से नेता या यों कहिये कि भारत के अधिकांश नेता सैनिक वाद और साम्राज्यवाद के नाम पर जापान के विरुद्ध बहुत कुछ कहते सुनते थे उस समय भी मालवीय जी ने जापान के विरुद्ध एक शब्द नहीं कहा। चीन जापान के झगड़े से उन्हें सन्ताप होता था, वह इन दोनों में लड़ाई नहीं मेल देखना चाहते थे पर वह

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

यह भी मानते थे कि इस समय एशिया का नेतृत्व जापान कर रहा है और उसे कमजोर करने में हमें सहायक न होना चाहिये । चीन की दशा भारत जैसी ही थी । दोनों की अर्थ व्यवस्था भी अधिकतर कृषि पर आश्रित रही है । पश्चिमीय जगत की अर्थ व्यवस्था मशीन तथा अधिक उत्पादन पर आधारित थी जिसका परिणाम साम्राज्यवाद तथा पूंजीवाद के रूप में प्रकट हुआ । अनियंत्रित औद्योगीकरण का परिणाम यह होता ही है । मालवीय जी औद्योगीकरण के पक्षपाती थे मगर औद्योगीकरण के लिये नहीं वरन् प्रगति की घुड़ दौड़ में पीछे न पड़ जाने के उद्देश्य से । हिन्दू विश्व विद्यालय में शिल्पकला विज्ञान पर उन्होंने इसीलिये सबसे अधिक जोर दिया और वहाँ के इंजीनियरिंग कालेज इत्यादि विभागों की उन्नति में वह सतत प्रयत्नशील रहे । दुनिया जानती है कि आज अपने इंजीनियरिंग कालेज के कारण भी काशी हिन्दू विश्व विद्यालय का देश में ही नहीं समस्त एशिया में सर्वोपरि स्थान है और उसकी गणना संसार के इने गिने विश्वविद्यालयों में होती है ।

पश्चिम के अनियंत्रित औद्योगीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न पूंजीवाद तथा साम्राज्यवाद की प्रतिक्रिया रूसी समाजवाद के रूप में संसार के सामने आई तो मालवीय जी ने माना कि पूंजीवाद का परिमार्जन तो समाजवाद से हो जाता है पर अनियंत्रित औद्योगीकरण अथवा यंत्रवाद का दोष तो इससे दूर होता नहीं वरन् ज्यों का त्यों बना रहता है । महात्मा जी की तथा कथित गांधी अर्थ व्यवस्था से भी वह सन्तुष्ट न थे । यंत्रवाद के इस युग में चर्खा देश को बहुत आगे नहीं ले जा सकता ऐसा उनका विचार था । चर्खे और खादी का समर्थन उन्होंने किया पर केवल ग्रामीण उद्योग धन्धे के रूप में ही । इन दोनों के बीच की अर्थात् जापानी अर्थ व्यवस्था के वह कायल थे । छोटी, सस्ती मशीनों का निर्माण हो, ऐसी मशीनों का जिसे अबाल, वृद्ध, वनिता सभी चला सकें और उत्पादन पर संगठित नियंत्रण हो, कोई बेकार न रहे जापानी अर्थ व्यवस्था की यह विशेषता है और भारत के लिये मालवीय जी इसी अर्थ व्यवस्था को लाभप्रद मानते थे । विकेन्द्रीकरण जापानी अर्थ व्यवस्था का मूल मंत्र है और प्राचीन भारतीय व्यवस्था में भी यही सिद्धान्त सदैव से निहित रहा है ।

बुद्ध धर्मानुयायी होने के कारण भी जापान पर उनका स्नेह था । सन् १९२३ में बनारस में हिन्दू महासभा का जो ऐतिहासिक अधिवेशन हुआ था उसमें उन्हीं के विशेष निमंत्रण पर बौद्ध धर्मानुयायियों के प्रतिनिधि के रूप में अनागरिक धर्मपाल तथा कितने ही बौद्ध

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

धर्मानुयायी सम्मिलित हुये थे। सभापति पद से जो भाषण मालवीय जी ने दिया था उसका प्रारम्भ उन्होंने निम्नलिखित श्लोक से किया था :

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो ।
बौद्धाः बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैन शासनरताः कर्मेति मीमांसकाः ।
सो यं नो विदधातु वांछित फलं त्रैलोक्य नाथो हरिः ।।

अपने इस महत्वपूर्ण भाषण में उन्होंने बौद्धों को भी हिन्दू प्रमाणित किया था और कहा था "बौद्ध धर्म हमारे प्राचीन वैदिक धर्म का ही एक अंग है।" आगे चलकर उन्होंने बर्मा के प्रसिद्ध बौद्ध भिक्षु नेता भिक्षु उत्तम को हिन्दू महासभा के सभापति पद पर भी बुलवाया था। सारनाथ के प्रसिद्ध बौद्ध चैत्य का शिलारोपण संस्कार मालवीय जी के ही पवित्र हाथों से हुआ था। इतना ही नहीं जापान में हिन्दू महासभा की एक शाखा भी बनी थी और उसके सभापति थे प्रसिद्ध भारतीय क्रान्तिकारी श्री रास बिहारी बोस जिन्होंने द्वितीय महायुद्ध के समय तथा नेता जी सुभाषचन्द्र जी बोस के पूर्वीय एशिया में आने के पहले भारतीय स्वातंत्र्य सभा और भारतीय राष्ट्र सेना का संगठन किया था।

सन् ३० में जब सरकार ने जापानी माल के बढ़ते हुये मुकाबिले से लंकाशायर को बचाने के लिये भारतीय मिलों की दयनीय स्थिति का लाभ उठाकर भारत पर साम्राज्यी संरक्षण का सिद्धान्त लादना चाहा तो उन्होंने उसका प्रबल विरोध किया। एसेम्बली में दिया गया उनका वह भाषण अन्तिम तो था ही शायद सर्वोत्तम भी था। ४ घंटे लगातार वह बोले थे। एक एक वाक्य से उनकी प्रचंड देश भक्ति के अग्नि स्फुलिंग छूटे से पड़ते थे। सारे एसेम्बली भवन में सन्नाटा छाया हुआ था। भाषण करते करते एक बार तो वह मूर्छित से हो गये और सभापति पटेल को उन्हें रोककर कहना पड़ा था :

"शान्ति, शान्ति, मैं समझता हूं कि इसके पहले कि यह कुछ आगे कहें माननीय सदस्य को कुछ आराम की आवश्यकता है।"

भारतीय मिल मालिक अपने स्वार्थ में पड़कर सरकारी प्रस्ताव "साम्राज्यवादी संरक्षण" का समर्थन करने के लिये मालवीय जी पर बहुत जोर डाल रहे थे। इन मिल मालिकों में कितने ही म

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

जी के भक्त थे और उन्होंने हिन्दू विश्वविद्यालय के लिये मुक्त हस्त होकर मालवीय जी का भिक्षा पात्र भरा था ।

अपने इस अनमोल और महत्वपूर्ण भाषण में उन्होंने कहा था:

"सरकार ने ऐसा अपूर्व रास्ता पकड़ा है जिसका इतिहास में कहीं दृष्टांत नहीं मिलता । सरकार कोई ऐसा तात्विक परिवर्तन भी मानने को तैयार नहीं है जिसके साथ बहुमत हो । श्री जिन्ना और अन्य कई सदस्य इस धमकी में आकर बिल का समर्थन करने को तैयार है कि सरकार कहीं बिल को वापस न ले ले । यह कानूनी स्वेच्छाचारिता है । :शर्म शर्म की ध्वनि:। मुझे कई तार मिले है जिनमें बिल को नष्ट न करने के लिये कहा गया है । बहुतों ने मुझे अपने उन चन्दों का भी स्मरण दिलाया है जो उन्होंने हिन्दू विश्व विद्यालय के लिये दिये है । बहुतों ने तिलक स्वराज्य फन्ड में भी बहुत बड़ी बड़ी रकमें दी है । मैं भी मनुष्य हूँ । पर यदि मैं हिन्दू विश्वविद्यालय को अपने और अपने देश के बीच में आने दूँ तो मैं अपने और अपने ईश्वर के प्रति झूठा होऊँगा । :हर्षध्वनि: मैं मातृभूमि की वेदी पर सैकड़ों हिन्दू विश्व विद्यालयों की बलि चढ़ा सकता हूँ । :करतल ध्वनि: इस बिल का सिद्धान्त ही घातक है । यह बम्बई के व्यवसाय के लिये घातक है, देश के अन्य धन्धों को चौपट कर देगा । मैं चाहता हूँ कि बम्बई रहे और शेष भारत भी रहे । पर सबसे पहले देश की चिन्ता होनी चाहिये । सारा देश नष्ट हो जायगा तो बम्बई समृद्ध नहीं हो सकता । लंकाशायर के पुनः संगठित हो जाने के बाद बम्बई उससे मुकाबिला नहीं कर पायेगा ।"

"अपने मित्रों से मैं कहता हूँ कि भय त्याग दो, सत्पथ गामी हो, न्याय प्रेमी बनो । ऐसी शक्ति के सामने सरकार की क्या मजाल ? मैंने जो संशोधन रखा है उसे स्वीकार करो । सरकार से कह दो कि एक बूंद जहर मिला हुआ दूध का प्याला हमें नहीं चाहिये । देखें वह कैसे मेरे संशोधन से इंकार करते है ? मैं कहता हूँ मेरे संशोधन को अस्वीकार करने से सरकार के पैर कांप जायेंगे । यदि मेरे संशोधन को सरकार अस्वीकार करे तो इससे बम्बई का नुकसान नहीं हो सकता । देश विदेशी कपड़े बिल्कुल न पहनने का संकल्प करेगा ।"

सरकार झुकने जा रही थी पर मिल मालिक नहीं माने । बम्बई के प्रतिनिधि मि० जिना ने सरकार को विश्वास दिला दिया कि उनका दल सरकार का साथ देगा और इस प्रकार ४४ के विपक्ष ६० वोटों से मालवीय जी का संशोधन रद हो गया और सरकार

गई । मालवीय जी को इस सरकारी धाँधली तथा बम्बई के मिल मालिकों की स्वार्थपरता से घोर कष्ट पहुँचा । उन्होंने अपने सात अनुयायियों के साथ एसेम्बली की सदस्यता से स्तीफा दे दिया । अपने स्तीफे में उन्होंने लिखा था :

"सरकार ने धमकी द्वारा एसेम्बली को अपनी बात मानने पर मजबूर किया है, उसके मत स्वातंत्र्य पर हमला किया है । इससे मेरे दिल को गहरा धक्का लगा है और यह बात अब और भी प्रत्यक्ष हो गयी है कि वर्तमान शासन प्रणाली में सरकार जो चाहे कर सकती है । अतः मुझे बाध्य होकर यह निश्चय करना पड़ा है कि जिस शासन प्रणाली में देश के साथ ऐसा अन्याय सम्भव है, एसेम्बली का सदस्य बने रहकर, उससे मुझे कदापि सहयोग नहीं करना चाहिए। अपने शेष जीवन में मैं अपना यह कर्तव्य समझूँगा कि अपनी सारी शक्ति और समय इस शासन प्रणाली को बदल कर ऐसी शासन प्रणाली स्थापित करने में लगाऊँ जो शासन या सरकार कहलाने की अधिकारिणी हो ।"

उस समय एसेम्बली में विरोधी दल के नेता मालवीय जी ही थे । उनके स्तीफा देने के बाद स्वर्गीय विट्ठल भाई पटेल भी सभापति पद से स्तीफा देकर बाहर आ गये । गाँधी जी ने , नमक सत्याग्रह प्रारम्भ कर ही दिया था । मालवीय जी ने "विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार" का आन्दोलन चलाया । सभापति पटेल के साथ उन्होंने सारे देश में घूम घूम कर बहिष्कार का ऐसा प्रचंड आन्दोलन किया कि लंकाशायर तथा अंग्रेजों के कदम डगमगा गये । मालवीय जी के आन्दोलन में नर्म दल के लोग भी शामिल होने लगे थे । सरकार एक दम घबरा गयी । लार्ड इरविन को गाँधी जी से समझौता करना पड़ा ।

बम्बई के उद्योग पतियों की उपर्युक्त नाराजी मालवीय जी को बहुत मँहगी पड़ी । १६३४ में साम्प्रदायिक निर्णय के प्रश्न पर जब कांग्रेस के साथ उनका विरोध हुआ तो चुनावों के समय उन्हें रुपयों की बेहद कमी हो गयी । मुझे खूब अच्छी तरह स्मरण है सारे देश में चुनाव लड़ने के लिये वह केवल अधिक से अधिक डेढ़ लाख रुपये मात्र एकत्र कर पाये थे जिसमें शायद ८० हजार बंगाल, ४० हजार पंजाब और बाकी में अन्य सारे प्रान्तों को दिया गया था । यहाँ तक कि उनके अपने पत्र दिल्ली के "हिन्दुस्तान टाइम्स" तक ने इस चुनाव में उनका साथ नहीं दिया और कांग्रेस का समर्थन कर रहा था । अपने धनिक वर्ग की इन करतूतों का अपने अन्तिम दिनों में उनके हृदय

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

पर क्या प्रभाव पड़ा था । इस सम्बन्ध मे मेरा चुप रहना ही उचित है। आप उस परिस्थिति मे अपने को रख लीजिये तो कुछ न कुछ कल्पना तो आप स्वयमेव कर ही लेंगे । हां, इतना कह देना अनुचित न होगा कि धनिक वर्ग पर से उनका विश्वास बिलकुल उठ चुका था और इस कारण कभी कभी वह बहुत क्षुभित और दुःखित हो उठते थे ।

घरेलू राजनीति मे जैसा मैंने ऊपर कहा है मालवीय जी कभी दल या वाद के चक्कर मे नहीं पड़े । वह उत्कट देश भक्त थे और वह सभी दल और वाद को अपने साथ लेने को तैयार थे बशर्ते कि उनकी देशभक्ति सन्देह से परे हो और उससे देश का भला होने वाला हो । किसी भी सच्चे देश भक्त का, चाहे उससे उनका कितना ही मतभेद क्यों न हो, विरोध करना वह पाप समझते थे । रहो और रहने दो यह उनका मूल मन्त्र था । स्वयं कांग्रेसी होते हुये भी वह इस बात को बरदाश्त नहीं कर सकते थे कि पं० हृदय नाथ कुंजरू, स्वर्गीय सी०वाई० चिन्तामणि जैसे महान योग्य देशभक्त कौंसिलों और असेम्बलियों मे जाकर अपनी बुद्धि के अनुसार देश की सेवा करने से वंचित कर दिये जांय । कांग्रेस दलबन्दी मे विश्वास करती थी । मालवीय वे इस कारण प्रायः कांग्रेस का विरोध कर बैठते थे कि वह पं० कुंजरू और चिन्तामणि जैसे व्यक्तियों का विरोध क्यों करती है । उनकी देशभक्ति तो सभी देश भक्तों की योग्यता का देश के हित मे लाभ उठाना चाहती थी भले ही उसका उनसे किसी प्रश्न पर कितना ही मतभेद क्यों न हो । एक अरबी घोड़े से भी हमारा गधा लाख दर्जे अच्छा है महज इसलिये क्योंकि वह मेरा गधा है । इस सिद्धान्त के वह घोर विरोधी थे और उसे देश के व्याय के उत्तम हितों के विपरीत समझते थे । पं० कुंजरू और चिन्तामणि जी तो माडरेट थे । क्रान्तिकारियों के राजकुमार श्री रास बिहारी बोस,श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल,श्री चन्द्र शेखर आजाद इत्यादि को भी मालवीय जी ने समय समय पर जो सहायता की वह कोई बड़ा से बड़ा क्रान्तिकारी भी नहीं कर सकता था । इसीलिये क्रान्तिकारी दल की भी उन पर श्रद्धा थी और आवश्यकता पड़ने पर उससे सहायता लेने मे भी उन्हें झिझक न थी । सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री मनमोहन गुप्ता ने अपने संस्मरणों मे ठीक ही लिखा है कि मालवीय जी सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी आजाद को पुत्रवत प्यार करते थे और समय समय पर उनकी सहायता करते रहते थे । सर माइकेल ओडायर ने यह लिखते समय कोई बड़ा

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

गलत बात नहीं कही थी कि मालवीय जी हृदय से क्रान्तिकारियों के साथ रहे हैं और इन्होंने ही अपनी वक्तृताओं द्वारा उन्हें उत्तेजित किया है। गांधी जी और कांग्रेस के सहायक वह थे ही। राजा महाराजा, ताल्लुकेदार और रईस भी उन्हें अपना समझते थे और उन पर पूर्ण विश्वास रखते थे। वही पहले भारतीय नेता थे जिन्होंने सन् १६१८ में पहले पहल किसानों का संगठन "किसान सभा" के नाम से करके उनकी ओर से मिस्टर मान्टेगु के पास एक "किसानों का घोषणा पत्र" भिजवाया था। १६१८ में अपने सभापतित्व में होने वाली दिल्ली कांग्रेस में उन्होंने पहले पहल कांग्रेस का दरवाजा खोला था और उनके करीब एक हजार प्रतिनिधियों को निःशुल्क कांग्रेस का प्रतिनिधि स्वीकार किया था। गरीबों, अनाथों, दुखियों के तो वह विशेष रूप से सहायक थे। आज के नेताओं की तरह वह किसी का दुःख सुनने और उसकी सहायता करने से इसलिये इंकार नहीं कर देते थे कि यह एक व्यक्तिगत प्रश्न है। उनका दरबार भगवान शंकर का दरबार था जहाँ किस किसी को हर समय हरदम जाने और मनमाने रूप से उनका समय लेने की पूर्ण स्वतंत्रता थी। किसी को भी निराश करते उन्हें कष्ट होता था।

इस सम्बन्ध में एक घटना आज भी मुझे भुलाये नहीं भूलती। उन दिनों मैं बनारस हिन्दू स्कूल में पढ़ता था और वहीं पूज्य बाबू जी :मालवीय जी: के साथ वाइस चांसलरी लाज में रहता था। पूज्य मालवीय जी के सबसे छोटे पुत्र मेरे चाचा पं० गोविन्द मालवीय जी भी साथ ही रहते थे। मालवीय जी की तबीयत काफी खराब थी और डाक्टरों ने उन्हें किसी से मिलने जुलने तथा बातें करने की सख्त मनाही कर दी थी। यों तो वह किसी की मानने वाले न थे इसलिये गोविन्द चाचा ने मकान के सबसे पिछले ऊपरी हिस्से के एक कमरे में उनके रहने का प्रबन्ध किया। एक दिन कुछ मद्रासी भाई मालवीय जी के दर्शनों की अभिलाषा से बंगले पर आये। गोविन्द चाचा उन्हें मिलने से रोक रहे थे और वह लोग कहते थे कि बिना दर्शन किये हम जायेंगे नहीं। दर्शनार्थी जोर जोर से चिल्ला चिल्ला कर बातें करने लगे। आवाज बाबू जी के कानों तक पहुँच गयी। उन्होंने मुझे बुलाया और पूछा कि मामला क्या है। मैंने बतला दिया। उन्होंने कहा, "बुलाओ गोविन्द को।" मैं बुला लाया। आते ही गोविन्द चाचा पर बाबू जी नाराज होने लगे।

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

बोले, "मुझसे मिलने आने वालों को रोकने का तुम्हें क्या अधिकार है ? यह बंगला जनता का है, मेरी व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं । मैं जनता की सेवा करता हूँ इसीलिये यहाँ रहता हूँ । जनता को अधिकार है कि वह जब चाहे अपने सेवक से सेवा ले सकती है । जाओ, उन लोगों को बुला लाओ । गोविन्द चाचा भी नाराज हो गये । कुछ तर्क वितर्क करने शुरू किये । बाबू जी का धैर्य छूट गया । उन्होंने खिझ कर कहा, "गोविन्द, मैं तुमसे तर्क नहीं सुनना चाहता । यदि तुम्हें इन बातों से कष्ट होता है तो अच्छा हो तुम अपने रहने का प्रबन्ध किसी दूसरी जगह कर लो । इस मकान पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है । यहाँ रखकर तुम्हें मैं अपने और जनता के बीच में आने का अधिकार कदापि नहीं दे सकता । अच्छा, तुम जाओ और उन लोगों को यहाँ बुला लाओ । बेचारे इतनी दूर से आते हैं । बार-बार आने का पैसा बेचारे गरीबों के पास कहाँ ? और गोविन्द, वे चाहते क्या हैं ? कुछ नहीं केवल अपने सेवक का दर्शन । और तुम उन्हें रोक रहे हो । छिः, छिः कैसी छोटी बात है ?" गोविन्द चाचा मुँह लटकाये चुप रह गये । मैं गया और उन लोगों को बुला कर उन्हें बाबू जी के दर्शन कराये । एक इस घटना से ही आपको जनता के प्रति उनकी भावनाओं की एक सुन्दर झाँकी मिल जाती है ।

गांधी जी का दरबार ठीक इसके विपरीत था । पहले से समय निर्धारित कर, ठीक समय से उनसे मिलना जरूरी था । नियत समय से एक क्षण भी आप अधिक नहीं ले सकते थे । यह मैं किसी बुरी भावना से नहीं लिख रहा हूँ । गांधी जी के लिये ऐसा करना नितान्त आवश्यक था । देश के लिये उनके समय की बहुत बड़ी कीमत थी । मैंने तो यह आपको महज इसलिये बतलाया है जिससे आपको इन दोनों महात्माओं की मनोवृत्ति को समझने में सहायता मिल सके । मालवीय जी द्वारा इस प्रकार समय की बरबादी कोई अच्छी या अनुकरणीय बात नहीं थी पर उनकी इस कमजोरी में भी उनकी महानता के ही दर्शन होते हैं । साधारण से साधारण गरीब से गरीब व्यक्ति का कष्ट देख और सुनकर वह विचलित हो जाते थे और उसका उनके समय पर उतना ही अधिकार था जितना देश के बड़े से बड़े व्यक्ति और समस्या का । पूज्य मालवीय जी

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

सबसे बड़ी विशेषता राजनीति में यदि बर्नार्डशा के शब्दों में कहूँ तो कह सकता हूँ, यह थी कि जब दूसरे गलत मार्ग पर होते थे तो उनका मार्ग सही होता था ।

समय की पाबन्दी न कर पाना उनके लिये मजबूरी ज्यादा थी, कमजोरी शायद कम ।

मैंने आपका बहुत समय लिया । इसका मुझे दुःख है । पर मैं करूँ क्या ? आपने मुझे विषय ही ऐसा दिया था । अन्त में मैं इतना ही कहूँगा यद्यपि मालवीय जी का शरीर आज हमारे बीच में नहीं है तथापि उनकी आत्मा का प्रकाश आज भी पहले जैसा ही हमारा मार्ग प्रदर्शन कर रहा है, हमें उत्साहित कर रहा है और हमसे पुकार पुकार कर कह रहा है :

उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूति कर्मसु: ।
भविष्यतीत्येव मन: कृत्वा, सततं मव्यथै: ।।

अर्थात् :

उठिये, जगिये, होइये आशु कार्य संलग्न ।
होगा निश्चय राखिये सदा सफल शुभ यत्न ।।

आइये हम सब उस ब्रह्मर्षि का पदानुगमन करें ।
मालवीय जी नहीं रहे, मालवीय जी चिरंजीवी हों ।।

: पद्मकान्त मालवीय

ठठठठठठठठठठठठ

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत
National Archives of India

(Duplicate)

पूज्य मालवीय जी के पितामह पंडित प्रेमधर जी एक अत्यन्त गरीब पर सन्तोषी, चरित्रवान, परम धर्मिष्ठ और भगवद् भक्त मालवीय ब्रह्म थे। मालवीय अर्थात् "मालवा" से आये हुये। उनका अधिकांश समय अपने आराध्य राधा कृष्ण की उन भव्य और मनोहर मूर्तियों के पूजन में जाता था जो आज भी हमारे परिवार के उसी पुरातन मकान में वैसे ही स्थापित हैं और जिन पर मालवीय जी की इतनी अधिक आस्था थी अपने अन्तिम दिनों तक जब कभी वह प्रयाग से होकर गुजरे अपने ठाकुर जी का दर्शन किये बिना आगे नहीं बढ़ते थे। किसी प्रकार का संकट पड़ने पर मानों देवता की आज्ञा प्राप्त करने के लिए, आंख मूंद कर घंटों इन मूर्तियों के सामने हाथ जोड़ कर बैठे हुये मैंने उन्हें स्वयं देखा है। मालवीय जी के पिता हमारे पर बाबा, पंडित ब्रजनाथ जी पांच भाई थे। यह भी अपने पिता जी की ही तरह परम् भगवद् भक्त थे। संस्कृत विद्या तथा शास्त्रों में उनकी अच्छी गति थी। जीविका का एक मात्र साधन था। कथा वाचन और सो भी वर्ष में केवल दो चार बार। कथा पर जो कुछ चढ़ जाता था उसके अतिरिक्त वह किसी का दान स्वीकार नहीं करते थे। कहते थे कि दूसरों का अन्न खाकर उसे पचा सकने की शक्ति जिस ब्राह्मण में हो वही दान लेने का अधिकारी है। अपने श्रम अर्थात् कथा वाचन से जो प्राप्ति हो जाती है उससे ही हमें सन्तोष करना है। यद्यपि आज जब हम लोग किसी के यहाँ का भेंटा पूजा हुआ दान लेने से इंकार करते हैं तो लोग उसे अभिमान समझने लगते हैं, पर बात ऐसी है नहीं। यह नियम हमारे पूजनीय पर बाबा का बनाया हुआ है और यह उस समय बनाया गया था जिस समय परिवार की आर्थिक स्थिति सभी दृष्टियों से अत्यन्त कष्टकर ही कही जा सकती है।

सोचिये तो जरा हमारे वृद्ध प्रपितामह पं० प्रेमधर जी का एक छोटा सा मकान ही तो सम्पत्ति की दृष्टि से पूज्य बाबा पं० ब्रजनाथ को मिला था जो स्वयं चार भाई थे। और पर बाबा पं० ब्रजनाथ जी का स्वयं अपना परिवार न कुछ छोटा था और न उनके अन्य भाइयों का ही। हमारे पर बाबा स्वयं चार भाई थे और हमारे बाबा छै भाई तथा दो बहनें। उस छोटे से मकान के एक चौथाई हिस्से में हमारे पर बाबा अपने ६ पुत्रों और दो बहनों के साथ कैसे रहते होंगे। मेरे लिये तो आज भी यह प्रश्न पहेली बूझने जैसा ही है। गरीबी का यह हाल कि दोनों समय भरपेट सबको भोजन मिल जाय यही बहुत था, लड़के लड़कियों को शिक्षा देने की बात तो बहुत दूर। रात्रि में दिया जलाने के लिये तेल लाने का भी टोटा रहता था। गनीमत यही थी कि सारा परिवार एक साथ रहता था, रसोई एक साथ होती थी। इसलिये जैसे तैसे रात्रि में भोजन गृह में तेल का

NATIONAL ARCHIVES OF INDIA
राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

एक दीप तथा एक दो अन्य और दीप जलाकर किसी तरह काम चलाया जाता था, जिसे ६.१० के अन्दर बुझा देना जरूरी था। ऐसी दशा मे रात्रि मे बच्चे पढ़ सके इसके लिये दीपक कहाँ से आता ? मालवीय जी को म्युनिसिपलटी की लालटेनों के नीचे खड़े होकर या मित्रों के यहाँ जाकर रात्रि मे रहना और पढ़ना पड़ा था और कोई भाई तो अधिक पढ़ ही कहाँ सकते थे। मालवीय जी इतनी शिक्षा क्यों और कैसे पा सके इसकी भी एक सुन्दर सी कथा है जिसे मैंने अपने घर की बड़ी बुढ़ियों तथा बूढ़ों से सुन रक्खा है। यद्यपि आज के जमाने मे इन कथाओं पर विश्वास ला सकना अत्यन्त कठिन है पर है यह सत्य और जैसा आप भी मानेंगे सत्य कभी कभी उपन्यासों से अधिक रोचक तथा आश्चर्यजनक हुआ करता है।

मै ऊपर ही बतला चुका हूँ कि हमारे परबाबा परम् धार्मिक और भगवद् भक्त थे। सन् १८५६.६० मे वह अपने पूज्य पिता तथा माता जी का श्राद्ध कर्म करने के लिये गया जी गये थे। गया जी मे श्राद्ध कर्म समाप्त होने पर वहाँ के धर्म गुरु पंडे सुफल बुलाते है और यजमान को उनकी मनोवांछित कामना पूर्ण होने का आशीर्वाद देते है। सुफल बुलाते समय हमारे परबाबा ने अपनी यह कामना प्रकट की थी कि मेरे एक ऐसा पुत्र हो जिसके लिये कहा जाय कि "न भूतो न भविष्यति" अर्थात् ऐसा न हुआ और न होगा। इसी घटना के बाद मालवीय जी महराज का जन्म हुआ। कहा जाता है कि मेरे पर बाबा की धारणा थी कि उनके द्वारा गया जी मे मांगा जाने वाला उनका यही तीसरा पुत्र है। यही कारण था कि उन्होंने अपने इस तृतीय पुत्र के लिये जो कुछ भी वह अपनी उस संकीर्ण आर्थिक परिस्थितियों मे कर सकते थे, किया और आगे चलकर समय ने सिद्ध भी कर दिया कि उनकी धारणा असत्य न थी और गया जी मे श्रद्धापूर्वक मांगी गई उनकी याचना वास्तव मे सुफल हुयी।

हमारे परिवार मे धार्मिक उत्सव बड़े ही प्रेम और उमंग के साथ मनाये जाते रहे है, विशेषकर जन्माष्टमी, श्रावण मे झूले, दीपावली और होली। जन्माष्टमी उत्सव की तो बात ही निराली थी। श्रृंगार, गाना, बजाना, नृत्य, प्रसाद इत्यादि की धूम रहती थी। सम्भवतः इसीलिये हमारे परिवार मे संगीत का प्रचार भी सदैव से रहा है। मालवीय जी स्वयं अच्छे संगीतज्ञ थे।

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

अपने परबाबा का तो मुझे स्मरण नहीं, पर अपनी पर दादी का मुझे अच्छी तरह स्मरण है। उनके रहते त्यौहारों पर रसोई सदा पुराने घर मे होती थी, सारा परिवार वहीं इकट्ठा होता था, स्नान ध्यान पूजापाठ सब कुछ वहीं और अन्त मे मेरी परदादी स्वयं सबके माथे पर तिलक लगाती थीं। सम्मिलित कुटुम्ब प्रणाली के विरुद्ध कुछ भी क्यों न कहा जाय और यह मानते हुये भी कि उसके विरुद्ध जो कुछ कहा जाता है उसमे बहुत कुछ सत्य भी है, मै आज भी उन दिनों की याद कर उनके लिये तड़प उठता हूं। खैर, मै कहां का कहां चला जा रहा हूं।

यह सब कहने का कुल तात्पर्य इतना ही है कि मालवीय जी के जीवन पर इन परिस्थितियों की बड़ी जबरदस्त छाप थी। वह परम धार्मिक, भगवद् भक्त, साधक, प्राचीनता के समर्थक और पुजारी तथा स्वयं मुक्त भोगी होने के कारण गरीबी के दुश्मन और गरीब विद्यार्थियों के

राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत National Archives of India

यहीं पर अब मैं आपका थोड़ा संक्षिप्त परिचय उस परिवार और उन व्यक्तिगत परिस्थितियों से भी करा देना चाहता हूं जिनमें मालवीय जी जन्मे, पाले पोसे गये और बड़े हुये क्योंकि, और लोग मानें या न मानें, मैं मानता हूं कि लोगों के निर्माण में व्यक्तिगत परिस्थितियों का भी बहुत बड़ा हाथ होता है।

राष्ट्रीय अभिलेखागार
भारत
National Archives
of India

मालवीय जी प्रकृति से और मूलतः "व्यास" थे : क्रियात्मक राजनीतिज्ञ नहीं : राजनीति में तो उन्हें जबर्दस्ती पड़ना पड़ा था : महज इसलिये कि क्यों कि बिना स्वराज्य के स्वदेश, स्वजाति, स्वभाषा, स्वधर्म अर्थात् अपना जो कुछ भी था, यहां तक कि "स्व" भी खतरे में था : राजनीति के कारण ही सब बिगड़ रहे थे और इसलिये राजनीति से अलग रह सकना उनके या किसी भी ईमानदार भारतीय के लिये संभव न था : और जब किसी क्षेत्र में मालवीय जी आ जायं तो वह उनकी छाप से अछूता रह जाय, या वह

राष्ट्रीय अभिलेखागार
भारत
National Archives
of India